HISTORY OF HINDI LITERATURE

MODERN PERIOD-PROSE

Study material

II SEMESTER
B.A HINDI

COMPLEMENTARY COURSE

CU-CBCSS

(2014 Admission)

UNIVERSITY OF CALICUT
SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION

Calicut university P.O, Malappuram, Kerala, India 673 635.

1023

UNIVERSITY OF CALICUT
SCHOOL OF DISTANCE EDUCATION

Study material

II SEMESTER
B.A HINDI

COMPLEMENTARY COURSE

HISTORY OF HINDI LITERATURE MODERN PERIOD-PROSE

Prepared by

LEKHA. M
GUEST LECTURER
DEPARTMENT OF HINDI
UNIVERSITY OF CALICUT

Edited and Scrutinised by

DR. N. GIRIJA
ASSOCIATE PROFESSOR OF HINDI
GOVT. ARTS & SCIENCE COLLEGE
KOZHIKODE

Type settings & Lay out
Computer Section, SDE

©
Reserved

विषय सूची

- **Module I**

- **Module II**

  हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव और विकास

- **Module III**

  हिन्दी नाटक का विकास

- **Module IV**

  जीवनी साहित्य

Module I

हिन्दी साहित्य के इतिहास में आधुनिक काल का अत्यधिक महत्व है। इस काल में ही गद्य साहित्य का विकास हिन्दी में हुआ। आधुनिक युग में हिन्दी भाषा में नाटक, उपन्यास, कहानी, निबन्ध, आलोचना, इतिहास और साहित्य के अन्य क्षेत्रों का सर्वांगीण विकास हुआ।

हिन्दी साहित्य के आधुनिककाल का आरंभ शुक्ल जी ने 1900 से माना है। लेकिन कुछ अन्य विद्धानों ने सन् 1850 से ही माना है। आधुनिक काल की एक अन्य विशेषता यही है कि इस समय में खड़ी बोली साहित्यिक भाषा के रूप में विकास करने लगी। इससे पहले साहित्य केवल पद्य रूप में लिखा जाता था, पर आधुनिक युग में गद्य का भी विकास हुआ। इसलिए आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने इसे 'गद्य काल' की संज्ञा दी थी।

परिस्थितियाँ

रीतिकाल के अन्त तक भारत पूर्ण रूप से अंग्रेज़ी शासन के अधीन हो गया। रीतिकालीन साहित्य एवं विलासिता का अन्त हो गया। सन् 1857 में प्रथम स्वतंत्रता संग्राम, सन् 1885 में इंडियन नैशनल कांग्रेस की स्थापना आदि के फलस्वरूप हुए राष्ट्रीय नवजागरण भी तत्कालीन साहित्य में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है।

अंग्रेज़ी शिक्षा के फलस्वरूप शिक्षित भारतीय जनता जागृत होने लगी। सामाजिक बुराइयों और अंधविश्वासों को तोड़ने के लिए कई आन्दोलन चले। ब्रह्म समाज, आर्य समाज और विवेकानन्द, गांधिजी जैसी नेताओं के माध्यम से यह संभव हुआ। बाल विवाह, सती जैसी प्रथाएँ रोक दी गई।

प्रस्तुत समय में साहित्य आम जनता के लिए लिखा जाने लगा। राष्ट्रीय नवजागरण से प्रेरणा पाकर भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, महावीर प्रसाद द्विवेदी, मैथिली शरण गुप्तजी आदि साहित्यकार भी अपनी रचनाओं के माध्यम से नयी चेतना का प्रचार करने लगे। गद्य का आरंभ, खडी बोली भाषा का विकास यह सब इस युग की विशेषताएँ हैं।

खड़ी बोली गद्य का विकास

खड़ी बोली में गद्य की शुरुआत् पहले दक्षिणी साहित्य में मिलती है।

दक्खिनी गद्य

दक्षिण के साहित्यकारों ने अपनी भाषा को हिन्दी, हिन्दवी, दक्खिनी आदि अनेक नामों से पुकारा है। ख्वाजा बन्दे नवाज़ गोसुदराज, शाह मीराँजीशम्शुल, शाह बुरहानुद्दीन जानम, मुल्ला वजही आदि गद्य लेखकों के नाम विशेषरूप से उल्लेखनीय हैं। ख्वाजा बन्दे नवाज़ नेसूदराज ने कई रचनाएँ अरबी-फारसी में लिखी हैं, इसके अलावा दक्खिनी में उनकी

तीन रचनाएँ मिलती हैं। जैसे 'मीराजुल आशकीन', 'हिदायतनामा' और 'बारहमासा'। इनमें मीराजुल आशकीन दक्खिनी की पहली रचना मानी जाती है। मुल्ला वजही की 'सबरस' नामक गद्य रचना बहुत प्रौढ़ कृति है। अठारहवीं शती में दक्खिनी गद्य का स्थान उर्दू ने लेलिया जिससे दक्षिण में इसका विकास अवरुद्ध हो गया।

उत्तर भारत में खड़ी बोली गद्य का विकास

उत्तर भारत में खड़ी बोली गद्य की परंपरा सत्रहवीं-अठारहवीं शती से शुरू होती है। रामप्रसाद निरंजनी का भाषा-योग-वसिष्ठ (1741) और पण्डित दौलत राम का पद्मपुराण इनमें प्रमुख हैं। ये दोनों कृतियाँ अनूदित हैं।

उन्नीसवीं सदी के प्रारंभ में खड़ी बोली गद्य का वास्तविक रूप से सूत्रपात हुआ। इंशा अल्ला खाँ, मुंशी सदासुखलाल, लल्लूलाल तथा सदल मिश्र इस समय के प्रसिद्ध गद्य लेखक हैं।

इंशा अल्ला खाँ

ये उर्दू के प्रसिद्ध कवि थे। फिरभी उन्होंने अपनी 'उदयभान चरित' या 'रानी केतकी की कहानी' की रचना शुद्ध हिन्दवी में की है। हिन्दी की प्रथम कहानिकारों में इनका नाम शामिल है। खड़ी बोली कविता के क्षेत्र में अमीर खुसरो का जो स्थान है, वही खड़ी बोली गद्य के इतिहास में इंशा अल्ला खाँ का है।

मुंशी सदासुखलाल

ये दिल्ली निवासी एवं कंपनी के नौकर थे। उन्होंने श्रीमद् भागवत् का अनुवाद 'सुखसागर' नाम से किया है।

लल्लूलाल

ये आग्रा के निवासी थे और फोर्ट विल्लियम कॉलेज के अध्यापक थे। 'सिंहासन बत्तीसी', 'बेताल पच्चीसी' जैसे ग्यारह ग्रंथ उन्होंने लिखा है। भागवत् के दशम स्कन्ध के आधार पर 'प्रेम सागर' नामक रचना का निर्माण उन्होंने किया जो गद्य के क्षेत्र में विशिष्ट है।

सदल मिश्र

बिहार के निवासी सदल मिश्र भी फोर्ट विलियम कॉलेज में काम करते थे। 'चन्द्रावती', 'रामचरित्र' आदि आपकी प्रमुख रचनाएँ हैं। 'रामचरित्र' 'अध्यात्म रामायण' का खड़ी बोली अनुवाद है।

खड़ी बोली गद्य के विकास में प्रेस और पत्रकारिता, ईसाई मिशनरी, फोर्ट विलियम कॉलेज तथा नवजागरण काल में स्थापित सामाजिक सांस्कृतिक संस्थाओं का विशेष योगदान है।

हिन्दी गद्य के विकास में ईसाइयों का योगदान

हिन्दी गद्य के विकास में ईसाई पादरियों का बहुत योगदान है। आम जनता की भाषा खड़ी बोली में उन्होंने धर्म ग्रंथों का अनुवाद, व्याख्यान, लेख, पाठ्यपुस्तकें आदि की रचना की। पुस्तकों का प्रचार करने के लिए उन्होंने मुद्रणालयों की स्थापना भी की। 'बाइबिल' का हिन्दी में अनुवाद करके आम लोगों में उसे बाँटा। 'क्रिश्चियन लिटरेरी सोसायटी', क्रिश्चियन वर्नाक्युलर एजुकेशन सोसाइटी आदि संस्थाओं ने गद्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

फोर्ट विलियम कॉलेज का योगदान

सन् 1900 ई.में माकिर्वस वेलेजली ने फोर्ट विलियम कॉलेज की स्थापना की। कंपनी के सिविल सर्वट्स को तैयार करने के लिए इसकी स्थापना की थी। इस कॉलेज में अरबी, फारसी, संस्कृत, हिन्दुस्तानी, बंगला, तेलुगू, अर्थशास्त्र, गणित आदि विषयों की उच्च शिक्षा की व्यवस्था की गई थी। ईस्ट इंडिया कंपनी की भाषानीति को इस कॉलेज ने उसी रूप में अपना लिया था। हिन्दी खडीबोली के विकास में कॉलेज के लल्लूलाल, सदल मिश्र, गंगाप्रसाद शुक्ल, नरसिंह, सच्चिदानंद, खालीराम, दीनबन्धु, शेषशास्त्री आदि पंडितों का नाम उल्लेखनीय है। इन्होंने भाषा में सरलता, सरसता, माधुर्य एवं ओज लाने की कोशिश की। यहाँ के अध्यापकों ने खड़ी बोली में पाठ्यपुस्तकें, कोश और व्याकरण तैयार किये।

खड़ीबोली के विकास में आर्यसमाज, ब्रह्मसमाज और नागरी प्रचारिणी सभा का योगदान

स्वामी दयानंद सरस्वती से प्रेरित संस्था आर्य समाज ने सांस्कृतिक, धार्मिक, सामाजिक आदर्शों को जनता में प्रचलित करने के लिए गद्य को माध्यम बनाया था। मातृभाषा गुजराती होने पर भी तथा संस्कृत के प्रकांड पण्डित के रूप में प्रसिद्ध होने पर भी उन्होंने राष्ट्र हित को ध्यान में रखते हुए हिन्दी में भी साहित्य सृजन किया। 'सत्यार्थ प्रकाश' उनका महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसके अलावा पत्र-पत्रिकाओं एवं अनुवाद के माध्यम से आर्यसमाज ने हिन्दी गद्य को आगे बढ़ाया।

ब्रह्मसमाज के स्थापक राजाराम मोहनराय ने 1815 ई.में वेदान्तसूत्रों का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करवाया। 'बंगदूत' नाम से एक पत्रिका भी उन्होंने हिन्दी में निकाली थी।

राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार बढ़ाने के उद्देश्य से सन् 1863 में नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना काशी में हुई। बाबू श्यामसुन्दर दास, पं.रामनारायण मिश्र जैसे विद्वानों ने इस

संस्था को आगे बढ़ाया। हिन्दी भाषा तथा साहित्य के इतिहास लेखन, कोश निर्माण, प्राचीन पुस्तकों की हस्तलिखित प्रतियों की खोज आदि सभा का कार्य रहा। नागरी प्रचारिणी पत्रिका ने भी इस दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। 'पृथ्वीराज रासो', बीसलदेव रासो जैसे महत्वपूर्ण प्राचीन ग्रंथों का प्रकाशन सभा के द्वारा हुआ।

भारतेन्दु एवं द्विवेदी का योगदान

सन् 1850 और 1885 के बीच के कालखण्ड में भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने हिन्दी गद्य के क्षेत्र में नयी क्रान्ति का सूत्रपात किया। एक ओर उन्होंने निबन्ध, समालोचना, नाटक, संस्मरण, यात्रा वर्णन, इतिहास आदि अनेक गद्य रूपों का प्रवर्त्तन किया तो दूसरी ओर उन्होंने गद्य शैली को परिष्कृत एवं परिमार्जित किया। संस्कृत के तत्सम और तद्भव शब्दों तथा उर्दू के शब्दों का प्रयोग उन्होंने उचित रूप में किया है। भारतेन्दु के साथ-साथ प्रतापनारायण मिश्र, बालकृष्ण भट्ट, श्रीनिवासदास, राधाकृष्ण दास, राधाचरण गोस्वामी, बालमुकुन्द गुप्त, श्रद्धाराम फिल्लौरी, बदरी नारायण चौधरी आदि अनेकों लेखकों ने खड़ीबोली गद्य के विकास में योगदान दिया है। इनमें से कई लेखकों ने पत्र-पत्रिकाएँ भी चलाई थीं, जिनके माध्यम से तत्कालीन समय में गद्य का पर्याप्त विकास हुआ है। इस युग में व्यंग्यात्मक शैली का भी विकास हुआ।

भारतेन्दु के बाद महावीर प्रसाद द्विवेदी और उनके सहयोगियों ने गद्य का विकास किया। 'सरस्वती' पत्रिका के संपादक के रूप में द्विवेदी जी ने हिन्दी के गद्य और पद्य के क्षेत्र में जो कमियाँ थीं, उनको दूरकर खड़ी बोली का स्थान सशक्त किया, साथ ही गद्य के क्षेत्र को और भी परिष्कृत एवं प्रौढ़ बनाया। इसके लिए उन्होंने अन्य साहित्यकारों को प्रेरित भी किया। डॉ. श्याम सुन्दर दास, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, मिश्रबन्धु, अयोध्या सिंह उपाध्याय, गोपालराम गहमरी आदि इसकाल के प्रमुख गद्यकार हैं।

हिन्दी निबंध का विकास

गद्य साहित्य की विभिन्न विधाओं में निबंध का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें लेखक विश्व के किसी भी विषय, वस्तु या स्थिति के संबन्ध में अपने विचारों का वर्णन अपनी एक अलग साहित्यिक शैली में प्रस्तुत करता है। गद्य की अन्य विधाओं की तरह हिन्दी में आधुनिक काल में ही निबंध विधा का भी विकास होता है। उन्नीसवीं शताब्दी में विभिन्न सामाजिक एवं राजनीतिक आन्दोलनों के प्रवर्त्तन के कारण तथा पत्र-पत्रिकाओं के प्रकाशन के कारण इस विधा को पर्याप्त पोषण मिला।

हिन्दी के पहले निबंध के रूप में राजा शिवप्रसाद सितारेहिन्द के द्वारा लिखित 'राजा भोज का सपना' (1839 ई.) को माना जाता है। लेकिन भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और उनके सहयोगियों द्वारा ही हिन्दी में सही ढंग निबंधों का सूत्रपात हुआ था।

हिन्दी निबंध के इतिहास को मुख्य रूप से चार युगों में विभक्त कर सकते हैं:

1. भारतेन्दु युग
2. द्विवेदी युग
3. शुक्ल युग
4. शुक्लोत्तर युग

भारतेन्दु, द्विवेदी जी तथा शुक्लजी-तीनों हिन्दी निबंध के क्षेत्र में मील के पत्थर के रूप में हमारे सामने उपस्थित हैं। इसीलिए विकास के विभिन्न पड़ावों को उनके नाम से अभिहित किया गया है।

1. भारतेन्दु युग (1857-1900 **ई.)**

इस युग में भारतेन्दु तथा उनके साथी रचनाकारों ने अनेक दायित्वों का पालन किया था। साहित्यकार होने के साथ-साथ उन्होंने देश की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक चेतना को समुचित ढंग से आगे बढ़ाने का कार्य भी किया था। वे लेखक, साहित्यकार और संपादक भी थे। इन्होंने अपनी पत्र-पत्रिकाओं में सामयिक विषयों, सामाजिक आन्दोलनों और अन्य विषयों की चर्चा निबंधों के रूप में की। युगीन समस्याओं का वर्णन करने में ये निबंध अत्यंत सफल हुए।

इस युग के प्रमुख निबंधकार हैं: भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त, राधाचरण गोस्वामी, बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन', लाला श्रीनिवासदास, ठाकूर जगन्मोहन सिंह, पं. अबिकादत्त व्यास आदि।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र एक बहुमुखी प्रतिभा संपन्न निबंधकार थे। उन्होंने धर्म, समाज, राजनीति, आलोचना, यात्रा, प्रकृति-वर्णन, आत्मचरित, व्यंग्य विनोद आदि सभी विषयों पर निबंध लिखे हैं। उनके निबंध व्याख्यात्मक एवं विचारात्मक शैली के हैं।

बालकृष्ण भट्ट एक स्वतंत्रता रचनाकार थे। उनके निबंधों में प्रगतिशील विचार प्रमुख हैं। वे भारतेन्दु युग के सर्वश्रेष्ठ निबंधकार है। उन्होंने भारतेन्दु की व्याख्यात्मक और विचारात्मक शैली को आगे बढ़ाया। भट्टजी द्वारा स्वयं संपादित 'हिन्दी प्रदीप' पत्रिका में समय-समय पर उनके उपन्यास प्रकाशित होते आए हैं।

प्रताप नारायण मिश्र भी इस युग के महत्वपूर्ण निबंधकार थे। 'ब्राह्मण' उनके द्वारा संपादित पत्रिका थी। उसमें उनके लेख बड़ी मात्रा में छपते थे। मिश्रजी के निबंधों में मुहावरों का प्रयोग बड़ी मात्रा में हुआ है। भौं, पेट, नाक, दांत आदि पर उन्होंने विनोदपूर्ण शैली में लेख लिखे हैं।

बदरीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' 'आनन्द कादम्बिनी' नामक मासिक पत्रिका के संपादक थे। उनके निबंधों की भाषा में आलंकारिकता, कृत्रिमता एवं चमत्कारप्रियता सर्वत्र दिखाई देती है।

बालमुकुन्द गुप्त ने 'शिवशम्भू का चिट्ठा' नाम से लार्ड कर्जन को संबोधित करते हुए जो निबंध लिखे हैं उनमें भारतवासियों की राजनीतिक विवशता का कच्चा चिट्ठा पेश किया गया है।

संक्षेप में भारतेन्दु युग के निबंधकारों में विषय की व्यापकता एवं विविधता है। वे निबंध लेखक होने के साथ-साथ पत्रकार भी हैं अतः उनमें वैयक्तिकता के साथ-साथ सामाजिकता का समावेश भी है।

2. द्विवेदी युग (1900-1920 ई.)

आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी ने 'सरस्वती' पत्रिका के संपादन के साथ-साथ हिन्दी के निबंध साहित्य को नई दिशा दी। द्विवेदी जी ने सरस्वती के माध्यम से भाषा संस्कार एवं व्याकरण शुद्धि के जो प्रयास प्रारंभ किए उनका प्रभाव तत्कालीन सभी निबंधकारों पर किसी न किसी रूप में पड़ा।

आचार्य द्विवेदी ने 'बेकन' के निबंधों को आदर्श मानते हुए उनके निबंधों का अनुवाद 'बेकन विचार रत्नावली' के नाम से किया। सरस्वती के प्रकाशन से हिन्दी में साहित्यिक पत्रिकाओं के विकास को नया जोश मिला। उनके निबंधों में मौलिकता और साहित्यिक सौंदर्य का अभाव है।

द्विवेदी युग के एक अन्य महत्वपूर्ण निबंधकार है, बाबू श्याम सुन्दर दास। उन्होंने गंभीर, आलोचनात्मक निबंध लिखे। वे उच्चकोटि के आलोचक भी थे। द्विवेदी युग के सशक्त निबंधकार के रूप में सरदार पूर्ण सिंह का नाम आता है। उनके निबंधों में मानवतावादी दृष्टिकोण की प्रधानता है। पद्मसिंह शर्मा के दो निबंध संग्रह हैं: 'पत्म पराग' और 'प्रबंध मंजरी'। मित्रबन्धुओं ने भी कई निबंध लिखे हैं। पर उनका महत्व शिक्षा मूलक है। चन्द्रधर शर्मा गुलेरी द्विवेदी युग के प्रतिभाशाली एवं सशक्त गद्यकार थे। उनके निबंधों में अध्यापक की गंभीरता और व्यक्तित्व की गहरी छाप मिलती है। मौलिक निबंधों के साथ-साथ इस युग के रचनाकारों ने दूसरी भाषाओं के निबंधों के अनुवाद करने की परंपरा चलायी।

3. शुक्ल युग (1920 -40 ई.)

आचार्य रामचंद्र शुक्ल के हिन्दी निबंध साहित्य के क्षेत्र में पदार्पण के साथ इस धारा में एक नया मोड़ उपस्थित हुआ। उन्होंने 'चिन्तामणि' के माध्यम से पाठकों के समक्ष एक नई शैली और नए विचार को प्रस्तुत किया। हिन्दी निबंध परंपरा में शुक्लजी का स्थान सर्वश्रेष्ठ है। उन्होंने मनोवैज्ञानिक, साहित्यिक, सैद्धांतिक आदि सभी प्रकार के निबंध लिखे। इनका संकलन है 'चिन्तामणी'।

'चिन्तामणि' के निबंधों में बार-बार लोककल्याण का स्वर मुखरित होता है। इन निबंधों का ऐतिहासिक महत्व भी है। 'कविता क्या है', 'साधारणीकरण और व्यक्ति वैचित्र्यवाद', 'रसात्मक बोध के विविध रूप', 'काव्य में लोकमंगल की साधनावस्था', 'भारतेन्दु हरिश्चन्द्र' आदि उनके सैद्धान्तिक निबंध है जो साहित्य की आलोचना पर आधारित हैं। शुक्लजी के निबंधों में अद्‌भुत प्रतिभा और मौलिक चिन्तन दर्शनीय है। शुक्लजी जीवन से अध्यापक, मस्तिष्क से आलोचक और हृदय से कवि हैं।

शुक्ल युग के अन्य निबंधकार हैंः बाबू गुलाब राय, पदुमलाल पुन्नालाल बक्शी, माखनलाल चतुर्वेदी, वियोगी हरि, शांतिप्रिय द्विवेदी आदि। इस युग में बाबू गुलाब राय अपने साहित्यिक, मनोवैज्ञानिक, संस्मरणात्मक निबंधों के लिए तथा शांतिप्रिय द्विवेदी अपने भावनात्मक निबंधों के लिए प्रसिद्ध हैं। कवि जयशंकर प्रसाद मूलतः कवि और नाटककार हैं फिर भी उन्होंने अपने निबंध संग्रह 'काव्य, और कला तथा अन्य निबंध' के द्वारा काव्यात्मक गद्य शैली का परिचय दिया है। कवि सूर्यकान्त त्रिपाठी निराला के कई निबंध संग्रह प्रकाशित हुए जिनमें उनके विचारक, विद्रोही एवं व्यंग्यकार रूप प्रकट हुआ है।

4. शुक्लोत्तर युग (1940 -1985 ई.)

आचार्य शुक्लजी के बाद हिन्दी निबंध का क्षेत्र पर्याप्त समृद्ध हुआ। इस कालखण्ड में आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी, नन्ददुलारे वाजपेयी, डॉ. नगेन्द्र, जैनेन्द्र कुमार, डॉ. रामविलास शर्मा, रामधारी सिंह दिनकर, डॉ. भगीरथ मिश्र, अज्ञेय, विद्यानिवास मिश्र, हरिशंकर परसाई, इलाचन्द्र जोशी, प्रभाकर माचवे, शिवदान सिंह चौहान, धर्मवीर भारती आदि अनेक निबन्धकारों ने हिन्दी के निबंध साहित्य को विकसित किया।

इस युग के निबंधकारों में **आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी** का नाम सबसे महत्वपूर्ण है। 'अशोक के फूल', 'कुटज', 'कल्पलता', 'विचार और वितर्क' आदि उनके कई निबंध संग्रह प्रकाशित हुए। इनका विषय अत्यंत व्यापक एवं गहन है। भारतीय संस्कृति, भारतीय साहित्य एवं परंपरागत ज्ञानविज्ञान के साथ आधुनिक युग की विभिन्न परिस्थितियों एवं समस्याओं का भी विश्लेषण उन्होंने किया है। 'शिरीष के फूल', 'नाखून क्यों बढ़ते हैं' आदि उनके ललित

निबंधों में पाठकों के मन को एक ओर जीवन का गंभीर विश्लेषण करने का अवसर मिलता है तो, दूसरी ओर उनका मन रसानुभूति से भर जाता है। विषय की प्रकृति के अनुसा कभ-कभी उनकी भाषा संस्कृत-गर्भित हो जाती है तो कभी ग्रामीण शैली का सौंदर्य लेती है।

आचार्य नन्ददुलारे वाजपेयी ने भी हिन्दी निबंध साहित्य के विकास में योगदान दिया है। 'हिन्दी साहित्य : बीसवीं शताब्दी', 'आधुनिक साहित्य', 'नया साहित्य, नये प्रश्न' आदि उनके प्रसिद्ध निबंध संग्रह हैं। डॉ. नगेन्द्र ने साहित्य एवं कला संबंधी उत्कृष्ट निबंधों के द्वारा विचारात्मकता एवं वैयक्तिकता दोनों का समन्वय किया है।

कवि अज्ञेय के 'आत्मनेपद', 'त्रिशंकु', 'हिन्दी साहित्य का आधुनिक परिदृश्य' आदि निबंध संग्रह उनके अनुभवों का ही वैचारिक विश्लेषण है। 'आलवाल', 'भवन्ति', 'लिखि कागद कोरे' आदि भी उनके निबंध संग्रह हैं।

डॉ. रामविलास शर्मा भी हिन्दी के सशक्त निबंधकार हैं। उन्होंने तीखी, व्यंग्यपूर्ण एवं सशक्त शैली के निबंधों का सृजन किया है। उनके साथ-साथ अमृत राय तथा शिवदान सिंह चौहान ने भी प्रगतिशील दृष्टिकोण से साहित्य संबंधी निबंध लिखे हैं।

संस्मरणात्मक निबंधों और छोटे गद्य गीतों के समान सुंदर रेखाचित्रों को भी निबंध का एक अंग मानते हैं। महादेवी वर्मा के 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'श्रृंखला की कडियाँ', 'पथ के साथी', 'मेरा परिवार' आदि निबंध संग्रह अनुभूति से ओतप्रोत हैं।

ललित निबंधों की विधा की ओर भी लेखकों का ध्यान गया है। इन निबंधों में लालित्य की मात्रा अधिक है। ललित निबंधों में कल्पना-शीलता तथा भाव-प्रवणता के साथ-साथ ज्ञान और पांडित्य की संपन्नता भी अनिवार्य है। इस क्षेत्र के उल्लेखनीय निबंधकार हैं: विद्यानिवास मिश्र, कुबेरनाथ राय, शिव प्रसाद सिंह, प्रभाकर माचवे आदि। विद्यानिवास मिश्र के निबंध-संग्रहों- 'छितवन की छांह', 'तुम चंदन हम पानी' तथा 'आँगन का पंछी' और 'वंजारा मन' में अतीव ललित भाषा में भारतीय लोकजीवन का संबंध भारतीय साहित्य व संस्कृति से जोड़ गया है। कुबेरनाथ राय के ललित निबंध संग्रहों- 'प्रिया नीलकंठी और 'रस आखेटक' में समकालीन लोकजीवन और संस्कृति एक व्यापक राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक पर्यावरण में प्रतिबिंबित हुई हैं। धर्मवीर भारती के ललित निबंध संग्रहों 'ठेले पर हिमालय', 'कहनी-अनकहनी' और 'पश्यन्ती' में लोक-जीवन, प्रकृति का गहन सान्निध्य, दार्शनिक चिन्तन तथा व्यंग्य और विनोद सरल एवं प्रभावी भाषा में मिलते हैं। साहित्येतर ललित निबंधों की रचना में रामवृक्ष बेनीपुरी के निबंध-संग्रह 'गेहूं और गुलाब' तथा 'बन्दे वाणी विनायकौ' अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

हास्य-व्यंग्यपूर्ण निबंधों के क्षेत्र में बेढ़व बनारसी, हरिशंकर परसाई, केशवचन्द्र वर्मा, रवीन्द्रनाथ त्यागी, लक्ष्मीकान्त वर्मा, शरद जोशी, नरेन्द्र कोहली आदि रचनाकारों के नाम उल्लेखनीय हैं।

इनके अलावा अनेक लेखकों ने हिन्दी में समाज, साहित्य संस्कृति, इतिहास, राजनीति, धर्म आदि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों का विवेचन करनेवाले कितने ही श्रेष्ठ निबंध लिखे हैं। भारतेन्दु युग से अब तक निबंध साहित्य में प्रौढ़ता आयी है जो कि आज भी विकास के पथ पर अग्रसर है।

प्रमुख निबंधकार

आचार्य रामचन्द्र शुक्लः

आचार्य रामचन्द्र शुक्ल का स्थान हिन्द निबंध के क्षेत्र में शीर्षस्थानीय है। इनके निबन्ध अन्तःप्रयास से निकली हुई सहज विचारधारा के प्रतिरूप हैं। उन्होंने मनोवैज्ञानिक, साहित्यिक, तथा सैद्धान्तिक सभी प्रकार के निबंध लिखे। उनके निबंधों का संग्रह है, चिन्तामणी। उनके मनोवैज्ञानिक निबंधों-लोभ, प्रीति, ईर्ष्या, श्रद्धा और क्रोध आदि में सामाजिक व्यावहारिकता, साहित्यकता और मनोविश्लेषण की सूक्ष्मता साथ-साथ चलती है। इस प्रकार आचार्य शुक्लजी ने समाजशास्त्री और मनोविज्ञानवेत्ता तथा साहित्यकार तीनों के कार्यों की सफलतापूर्वक पूर्ति की है। शुक्लजी के निबंधों में मौलिकता, स्पष्टता और रोचकता है।

आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी

'अशोक के फूल', 'कल्पलता', 'आलोक पर्व', 'विचार और वितर्क, 'मध्यकालीन धर्मसाधना', 'विचार प्रवाह' तथा 'कुटज' आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के महत्वपूर्ण निबंध-संग्रह हैं। वे शुक्लोत्तर युग के महान निबंधकार हैं। उनके निबंधों में हृदय की सरलता, प्राचीन साहित्य एवं संस्कृत का ज्ञान-वैभव, विचारों की मौलिकता एवं शैली की रोचकता का सफल समन्वय दृष्टिगोचर होता है। गंभीर ऐतिहासिक अध्ययन के कारण उनका दृष्टिकोण व्यापक एवं उदार है और उन पर रवीन्द्रनाथ टैगोर के मानवतावाद की गहन छाप है। उन्होंने साहित्य, समाज, संस्कृति और ज्योतिष आदि अनेक विषयों पर निबंध लिखे हैं। उन्होंने अपने ललित निबंधों में ललित भाषा का प्रयोग किया है।

डॉ. रामविलास शर्मा

प्रगतिवादी निबंधकारों में डॉ. रामविलास शर्मा का महत्वपूर्ण स्थान है। उन्होंने भाषा, साहित्य, संस्कृति, समाज और जीवन आदि से संबद्ध विषयों पर नानाविध निबंधों की रचना की है। उनकी रचनाएँ हैं- 'प्रगति और परंपरा', 'संस्कृति और साहित्य', 'भाषा साहित्य और संस्कृति', 'आस्था और सौंदर्य', 'विराम चिन्ह', 'मार्क्सवाद और प्रगतिशील साहित्य परंपरा का मूल्यांकन' आदि। उनकी निबंध शैली में स्वच्छता, प्रखरता तथा वैचारिक संपन्नता है।

Module II

हिन्दी उपन्यास का उद्‌भव और विकास

हिन्दी साहित्य के आधुनिक काल में विकसित गद्य विधाओं में उपन्यास साहित्य का महत्वपूर्ण स्थान है। हिन्दी में उपन्यास विधा का विकास अंग्रेज़ी एवं बांगला उपन्यासों के प्रभाव के कारण ही हुआ।

हिन्दी का प्रथम उपन्यास कौन-सा है इस संबंध में विद्वानों के बीच मतभेद रहा है। लाला श्रीनिवासदास का उपन्यास 'परीक्षागुरु', पं. गौरीदत्त का 'देवरानी जेठानी की कहानी', राधाकृष्णदास का 'निस्सहाय हिन्दू', श्रद्धाराम फिल्लौरी का 'भाग्यवती' आदि को विभिन्न विद्वानों ने हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना है। पर इनमें औपन्यासिक तत्व युक्त 'परीक्षा गुरु' को ही आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिन्दी का प्रथम उपन्यास माना है और आज यही सर्वमान्य है। हिन्दी उपन्यास विधा के विकास में सर्वाधिक योगदान देनेवाले, साहित्यकार प्रेमचंद को केंद्रबिन्दु मानकर ही प्रस्तुत विधा का काल विभाजन किया जाता है। इसप्रकार ये तीन चरण हैं:

1. पूर्व प्रेमचंद युग
2. प्रेमचंद युग
3. प्रेमचन्दोत्तर युग

I पूर्व प्रेमचंद युग

पूर्व प्रेमचंद युग के उपन्यास साहित्य को दो रूपों में बाँट सकते हैं:

1. भारतेन्दु युग और 2. द्विवेदी युग।

1. भारतेन्दु युग

इस काल में लिखे गये उपन्यास प्रमुख रूप से सुधारवादी एवं उपदेशवादी प्रवृत्ति से प्रेरित थे और उनका मुख्य उद्देश्य मनोरंजन ही माना जा सकता है। इस काल में सामाजिक, ऐतिहासिक, तिलस्मी, जासूसी उपन्यासों की रचना अधिक हुई है, जिनका जनजीवन से कोई प्रत्यक्ष संबंध नहीं है।

तिलस्मी उपन्यासों में प्रेम का चित्रण तो ज़रूर हुआ है पर उपन्यासकारों का मूल उद्देश्य रहस्य-रोमांच की ऐयारी एवं तिलस्मी दुनिया में ले जाकर पाठकों को चमत्कृत करना मात्र है।

सामाजिक उपन्यासों की कोटि में 'भाग्यवती' और 'परीक्षागुरु' के अलावा बालकृष्ण भट्ट की 'रहस्यकथा', 'नूतन ब्रह्मचारी', 'सौ अजान, एक सुजान' राधाकृष्ण दास द्वारा

रचित 'निस्सहाय हिन्दू' आदि उपन्यास आते हैं। तिलस्मी-ऐयारी उपन्यासों में श्री देवकीनंदन खत्री द्वारा रचित 'चन्द्रकान्ता', 'चन्द्रकान्ता सन्नति', 'नरेन्द्र मोहिनी' आदि शमिल हैं। उनके उपन्यास बड़े ही लोकप्रिय थे। गोपाल राम गहमरी ने करीब 200 से ज़्यादा जासूसी उपन्यास लिखे जिनमें 'अद्‌भुत लाश', 'गुप्तचर' आदि उल्लेखनीय हैं। प्रेमाख्यानक उपन्यास लिखनेवालों में ठाकुर जगन्मोहन सिंह का नाम प्रमुख है जिन्होंने स्वच्छंद प्रेम का चित्रण करनेवाला 'श्यामा स्वप्न' नामक सुन्दर उपन्यास लिखे हैं।

इस काल में बंगला और अंग्रेज़ी उपन्यासों का अनुवाद भी बड़ी मात्रा में हुआ था। बंकिम चन्द्र के 'दुर्गेश नंदिनी' उपन्यास का अनुवाद हिन्दी में गदाधर सिंह ने किया। प्रताप नारायण मिश्र ने बंकिम चन्द्र के अन्य अनेक उपन्यासों का अनुवाद किया। इस प्रकार हिन्दी के राधाचरण गोस्वामी, रामकृष्ण वर्मा, कार्तिक प्रसाद खत्री, गोपालराम गहमरी आदि कई लेखकों ने भी बंगला उपन्यासों के सफल अनुवाद प्रस्तुत किए।

महावीर प्रसाद द्विवेदी के युग में भी सामाजिक, ऐतिहासिक, जासूसी, तिलस्मी, ऐयारी उपन्यासों की रचना जारी रही। उस समय के सामाजिक उपन्यासों में सुधारवादी दृष्टिकोण को महत्व प्राप्त है। इस काल में भी बंगला और अंग्रेज़ी से अनुवाद कार्य जारी रहा। हिन्दी में मानव जीवन का सच्चा परिचय प्रस्तुत करनेवाले उपन्यासों का विकास प्रेमचंद के युग से ही प्रारंभ होता है।

II प्रेमचंद युग

हिन्दी में श्रेष्ठ मौलिक उपन्यासों की रचना वास्तव में प्रेमचंद से ही शुरू होती है। उन्होंने अपने उपन्यासों के माध्यम से तत्कालीन समय के विभिन्न सामाजिक समस्याओं को उद्‌घाटित किया। वे पहले उर्दू भाषा में नवाब राय के नाम से लिखते थे। प्रेमचंद द्वारा हिन्दी साहित्य में कदम रखने के बाद हिन्दी उपन्यास मनुष्य के यथार्थ जीवन को गहराई से प्रस्तुत करने लगा।

प्रेमचंद

प्रेमचंद के लिए उपन्यास सस्ते मनोरंजन का साधन नहीं था। उन्होंने अपने उपन्यासों में सामाजिक जीवन में आम आदमी की ज्वलंत समस्याओं का चित्रण किया। दहेज प्रथा, विधवा समस्या, बाल विवाह, अस्पृश्यता, देश की पराधीनता, किसानों की समस्या, मज़दूरों की समस्या, वेश्याओं की समस्या आदि सैकड़ों समस्याएँ इन उपन्यासों में चित्रित की गई हैं। 'निर्मला' में दहेज प्रथा की पीड़ा सहनेवाली निर्मला, 'गोदान' में उच्च वर्ग के शोषण से जीवन भर पीड़ित गरीब किसान होरी आदि आज भी हमारे समाज के सच्चे प्रतिनिधि हैं। प्रेमाश्रम, प्रतिज्ञा, सेवा सदन, कर्मभूमि, कायाकल्प, निर्मला, गबन, रंगभूमि, गोदान उनके प्रमुख उपन्यास हैं। 'मंगलसूत्र' अंतिम तथा अपूर्ण उपन्यास है। 'गोदान' प्रेमचंद का ही

नहीं, बल्कि हिन्दी उपन्यास साहित्य का ही श्रेष्ठ यथार्थवादी उपन्यास है। हिन्दी उपन्यास साहित्य में आधुनिकता की शुरूआत भी हम इस उपन्यास से मान सकते हैं। होरी अपने जीवन के अन्त में किसानी छोड़कर मज़दूर बन जाता है। रखनेवाले भारत में आज भी यह स्थिति जारी है। शिल्प और भाषा की दृष्टि से प्रेमचंद ने हिन्दी उपन्यास क्षेत्र को विशिष्ट स्थान प्रदान किया।

अन्य उपन्यासकार:

प्रेमचंद के युग में दो सौ से अधिक उपन्यासकारों ने इस क्षेत्र को विकसित करने का प्रयास किया। प्रेमचंद के अनुकरण में विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक ने माँ, भिखारिणी आदि उपन्यास लिखे। चतुरसेन शास्त्री अपनी मौलिकता दिखाते हुए 'हृदय की प्यास', हृदय की परख' आदि उपन्यास लिखे। प्रेमचंद के समकालीन लेखकों में जयशंकर प्रसाद का नाम आता है जिन्होंने 'कंकाल', 'तितली' आदि सामाजिक उपन्यास लिखे। भगवती चरण वर्मा ने 'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', जैसे उपन्यास लिखे। वृन्दावनलाल वर्मा ने सामाजिक उपन्यासों के अलावा 'गढकुंठार', 'विराटा की पद्मिनी' जैसे ऐतिहासिक उपन्यासों के माध्यम से नवीनता दिखाई।

III प्रेमचन्दोत्तर युग

प्रेमचंद के उपरांत हिन्दी उपन्यास किसी एक निश्चित दिशा की ओर अग्रसर नहीं हुआ अपितु उसकी विविध धाराएँ अनेक दिशाओं की ओर प्रवाहित हुई। विषय की दृष्टि से प्रेमचन्दोत्तर युगीन उपन्यासों का वर्गीकरण इस प्रकार कर सकते हैं:

1. मनोविश्लेषणवादी उपन्यास
2. साम्यवादी (प्रगतिवादी) उपन्यास
3. ऐतिहासिक उपन्यास
4. आंचलिक उपन्यास
5. प्रयोगवादी उपन्यास

यदि कालक्रम की दृष्टि से प्रेमचन्दोत्तर उपन्यासों का वर्गीकरण करें तो उसे तीन कालखण्डों में विभाजित कर सकते हैं:

1. 1936 से 1950 तक के उपन्यास
2. 1950 से 1960 तक के उपन्यास
3. 1960 के उपरान्त उपन्यास

1. मनोविश्लेषणवादी उपन्यास

मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों में जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, एवं अज्ञेय का नाम उल्लेखनीय है। जैनेन्द्र ने परख, सुनीता और त्यागपत्र के द्वारा हिन्दी उपन्यास को एक नयी दिशा प्रदान की। उनके अन्य उपन्यास हैं कल्याणी, सुखदा, विवर्त, व्यतीत। इन उपन्यासों में विभिन्न पात्रों के मन की उलझनें, अन्तर्द्वंद्व, शंकाएँ आदि का निरूपण कथा के माध्यम से किया गया है। 'त्यागपत्र' में मृणाल के आत्मपीड़न की गाथा का मनोवैज्ञानिक चित्रण हुआ है, साथ ही अनमेल विवाह के दुष्पिणामों का भी चित्रण हुआ है।

इस परंपरा के दूसरे उपन्यासकार इलाचन्द्र जोशी ने उच्चकोटि के लगभग एक दर्जन उपन्यासों की रचना की है। उनके प्रमुख उपन्यास हैं- संन्यासी, पर्दे की रानी, प्रेत और छाया, निर्वासित, जिप्सी और जहाज़ का पंछी। इन उपन्यासों के माध्यम से जोशीजी ने मानव मन की कुंठाओं एवं ग्रंथियों का सुन्दर विश्लेषण किया है।

मनोविश्लेषणपरक उपन्यासों में अज्ञेय द्वारा रचित शेखरः एक जीवनी, नदी के द्वीप तथा अपने-अपने अजनबी का महत्वपूर्ण स्थान है।

2. प्रगतिवादी उपन्यास

हिन्दी के साम्यवादी या प्रगतिवादी उपन्यास वे हैं जिनमें मार्क्सवादी विचारधारा को आधार बनाकर कथानक की सृष्टि की गई है। यशपाल, राहुल सांकृत्यायन, रांगेय राघव, भैरव प्रसाद गुप्त और अमृतराय इसी कोटि के उपन्यासकार हैं। यशपाल ने पार्टी कामरेड, दादा कामरेड, देशद्रोही, मनुष्य के रूप, अमिता, दिप्या, झूठा सच आदि उपन्यासों में अपने मार्क्सवादी विचारों को अभिव्यक्ति दी है। 'झूठा सच' देश के विभाजन पर आधारित है। भैरव प्रसाद गुप्त के मशाल, सती मैय्या का चौरा आदि उपन्यासों में भी मार्क्सवादी चेतना का चित्रण हुआ है।

इस युग के अन्य महत्वपूर्ण उपन्यासकार हैं अमृतलाल नागर और भगवती चरण वर्मा। चित्रलेखा, भूले बिसरे चित्र, टेढ़े-मेढ़े रास्ते, सबहिं नचावत राम गुसाईं आदि भगवती चरण वर्मा के प्रसिद्ध उपन्यास हैं। अमृतलाल नागर के प्रसिद्ध उपन्यास हैंः सेठ बाँकेमल, अमृत और विष, बूँद और समुद्र, सुहाग के नूपुर, मानस का हंस आदि।

3. ऐतिहासिक उपन्यास

हिन्दी के ऐतिहासिक उपन्यासकारों में बाबू वृन्दावन लाल वर्मा का नाम उल्लेखनीय है। गढकुण्डार, विराटा की पद्मिनी, झांसी की रानी, मृगनयनी, टूटे काँटे आदि उनके प्रमुख उपन्यास हैं। उनके अतिरिक्त चतुरसेन शास्त्री एवं हज़ारी प्रसाद द्विवेदी का नाम भी इस वर्ग में रखा जाता है। हज़ारी प्रसाद द्विवेदी के 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारुचन्द्रलेख', 'पुनर्नवा' और 'अनामदास का पोथा' में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय हुआ है।

इन उपन्यासों में ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक वातावरण की प्रस्तुति भी हुई है। राहुल सांकृत्यायन ने 'सिंह सेनापति' और 'जय यौधेय' नामक ऐतिहासिक उपन्यास लिखे तथा रांगोय राघव ने 'मुर्दों का टीला' में मोहनजोदड़ो के गणतंत्र का चित्रण किया है।

4. आंचलिक उपन्यास

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यासों में आंचलीक उपन्यास एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रही है। आंचलिक उपन्यास में किसी विशेष अंचल का चित्रण कथानक के द्वारा किया जाता है। हिन्दी के आंचलिक उपन्यासकारों में सबसे प्रमुख हैं, फणीश्वरनाथ रेणु। उनके 'मैला आंचल' तथा 'परती परिकथा' नामक उपन्यासों में बिहार के ग्रामीण अंचल के रहन-सहन, रीति-रिवाज़, राजनीतिक आस्थाओं आदि का विस्तृत वर्णन हुआ है। रेणु के अतिरिक्त अन्य आंचलिक उपन्यासकार हैं: नागार्जुन, उदयशंकर भट्ट, रांगेय राघव आदि। नागार्जुन द्वारा रचित आंचलिक उपन्यासों में 'रतिनाथ की चाची', 'बलचनमा', 'बाबा बटेसरनाथ', 'दुखमोचन' आदि महत्वपूर्ण हैं।

ग्रामीण परिवेश को आधार बनाकर भी कुछ उपन्यास लिखे गये हैं। इनमें प्रमुख हैं- आधा गांव (राही मासूम रज़ा), अलग- अलग वैतरणी (शिव प्रसाद सिंह) जंगल के फूल (राजेन्द्र अवस्थी), पानी के प्राचीर (राम दरश मिश्र) आदि।

इसी संदर्भ में व्यंग्यात्मक लहजे में भारतीय समाज के समग्र रूप को चित्रित करने का प्रयास किया गया है। इस दृष्टि से श्रीलाल शुक्ल कृत 'रागदरबारी' उल्लेखनीय है। इसमें स्वतंत्र भारत की मूल्यहीनता को बड़ी बेबाकी से प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

5. प्रयोगवादी उपन्यास एवं साठोत्तरी उपन्यास

स्वातंत्र्योत्तर भारत में हो रहे आर्थिक परिवर्तनों के कारण उत्पन्न औद्योगीकरण, बदलते हुए परिवेश, भ्रष्ट व्यवस्था, महानगरीय जीवन और यान्त्रिक सभ्यता के परिणाम से आज जीवन में तनाव, विश्रृंखलता, अकेलापन एवं निराशा घर कर गई है। कुंठा, संत्रास एवं असुरक्षा की भावना ने हमें संत्रस्त कर लिया है। हिन्दी के उपन्यासकारों ने इस स्थिति को अपने उपन्यासों में अभिव्यक्त किया है। मोहन राकेश के 'अंधेरे बंद कमरे', 'न आनेवाला कल' ऐसे ही उपन्यास है। मन्नू भण्डारी का 'आपका बंटी' तलाकशुदा दंपति के बच्चों पर पड़ने वाले दुष्प्रभावों का निरूपण करनेवाला उपन्यास है। 'वह पथ बन्धु था' में नरेश मेहता ने अकेलेपन एवं अजनबीपन का बोध कराया है। निर्मल वर्मा के उपन्यासों- 'वे दिन', 'लालटीन की छत' और 'एक चिथड़ा सुख' में भी आधुनिकता बोध मुखरित हुआ है।

भीष्म साहनी कृत 'तमस' में विभाजन की मानसिकता एवं उससे लाभ उठानेवाले लोगों को बेनकाब किया गया है। मनोहर श्याम जोशी कृत 'कुरु-कुरु स्वाहा' में युवा पीढ़ी की दिशा हीनता को अभिव्यक्त किया गया है। धर्मवीर भारती ने 'सूरज का सातवाँ घोड़ा' में तथा गिरिधर गोपाल ने 'चाँदनी के खण्डहर में' शिल्प की दृष्टि से नवीन प्रयोग किए हैं। कमलेश्वर के 'कितने पाकिस्तान', सुरेन्द्र वर्मा के 'मुझे चाँद चाहिए' , अल्का सरावगी के 'कलिकथा वाया बाइपास', पंकज बिष्ट के 'लेकिन दरवाज़ा' भी समकालीन दृष्टि से उल्लेखनीय उपन्यास हैं।

साठोत्तरी हिन्दी उपन्यास साहित्य में मन्नू भण्डारी, उषा प्रियंवदा तथा कृष्णा सोबती जैसी कई महिला उपन्यासकारों का जन्म हुआ। उनकी परंपरा ने आगे चलकर हिन्दी उपन्यास साहित्य में एक सशक्त उपस्थिति प्रस्तुत की, जोकि आज भी विद्यमान है।

महिला उपन्यासकार

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद भारत में व्यक्ति स्वतंत्रता तथा समानता का युग उत्पन्न हुआ था। इसीलिए इस काल के महिला उपन्यासकारों ने नारी की समस्याओं को अपने उपन्यासों में प्रस्तुत करके उसके वैयक्तिक स्वातंत्र्य की स्थापना की। इन उपन्यासों में नारी का एक विशिष्ट व्यक्तित्व प्रकट होता है। इस समय की लेखिकाओं में रजनी पनिकर, इन्दु बाली, चन्द्रकिरण सोनरेक्सा का नाम उल्लेखनीय है।

साठोत्तरी महिला उपन्यासकारों ने अपने उपन्यासों में स्त्रियों की दुनिया की जिन बाहरी-भीतरी तकलीफों और छटपटाहट को अभिव्यक्ति दी है, वैसा उससे पहले न कभी हुआ था और न कभी सोचा ही गया था। आधुनिक काल की नारी अपने जीवन के संबंध में गहनता से सोचने लगी है, अपने निर्णय स्वयं लेने लगी है, स्वयं अर्थोपार्जन करके स्वाभिमानी तथा स्वावलंबी बन चुकी है। इस परिप्रेक्ष्य में महिला लेखन में भी नारी चेतना का विकास हुआ। नारी के व्यक्तित्व, अस्तित्व, उसके स्वतंत्र विचारों और उसकी पीड़ा तथा कुंठाओं के चित्रण को इस काल के उपन्यासकारों ने अत्यधिक महत्व दिया है।

साठोत्तरी महिला लेखन के आधार स्तंभों के रूप में आनेवाली चार लेखिकाएँ हैं : मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, उषा प्रियंवदा और शिवानी। मन्नू भण्डारी ने मनोविज्ञान के धरातल पर 'आपका बंटी' तथा राजनीति को आधार बनाकर 'महाभोज' की रचना की थी। कृष्णा सोबती अपनी विशिष्ट पंजाबी लहजे के कारण हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में अलग पहचान बना चुकी हैं। 'मित्रो-मरजानी' की मित्रो माँस-मज्जा से बनी वह नारी है, जिसमें स्नेह, ममता और माँ बनने की चाह समाई हुई हैं। 'डार से बिछुडी', 'सूरजमुखी अँधेरे के' तथा 'ज़िन्दा मुहावरे' भी उनके सशक्त उपन्यास हैं। उषा प्रियंवदा ने आधुनिक जीवन की ऊब, संत्रास,

छटपटाहट एवं अकेलेपन को अपने उपन्यासों में संवेदनात्मक स्तर पर अभिव्यक्ति दी है। उन्होंने अपने पहले उपन्यास 'पचपन खंभे लाल दीवारे' में पारिवारिक उत्तरदायित्वों को वहन करती सुषमा के अन्तर्द्वन्द्वों का चित्रण किया है। 'रुकोगी नहीं राधिका' उनका एक अन्य प्रसिद्ध उपन्यास है।

इसी क्रम में आगे मेहसन्नीसा परवेज़ सूर्यबाला, मृदुला गर्ग, चित्रा मुद्गल, नासिरा शर्मा, मैत्रेयी पुष्पा, अलका सरावगी, गीतांजली श्री, महुआ माजी आदि कई नाम जुड़ते गये और ये सब आज हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में सशक्त हस्ताक्षर के रूप में विद्यमान हैं। आज के महिला उपन्यासकारों की विशेषता यही है कि ये केवल नारी चेतनायुक्त उपन्यासों का सृजन ही नहीं करते बल्कि उनकी दृष्टि अधिक व्यापक हो चुकी है और वे आजकल समाज में हो रही कई समस्याओं को आधार बनाकर उपन्यास लिख रही हैं।

आज का हिन्दी उपन्यास कई दिशाओं आगे की ओर बढ़ रहा है। मौलिक तथा अनूदित उपन्यासों की दृष्टि से यह क्षेत्र काफी संपन्न है। आजकल महिला लेखन के साथ-साथ दलित उपन्यासों की भी धारा हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में प्रवाहमान है। इस प्रकार भारतीय सामाजिक जीवन के सभी वर्गों एवं समुदायों का अंकन हिन्दी उपन्यासों में दिखाई देता है।

हिन्दी कहानी का उद्भव और विकास

हिन्दी गद्य विधाओं में 'कहानी' सबसे सशक्त विधा के रूप में विकसित हुई है। आज कहानी के पाठक अन्य सभी विधाओं की तुलना में सर्वाधिक हैं।

हिन्दी कहानी की विकास यात्रा सन् 1900 ई. के आसपास प्रारंभ हुई थी। हिन्दी की प्रथम कहानी कौन-सी है इस विषय में विद्वानों के बीच मतभेद है। इस संबंध में जिन कहानियों का नाम लिया जाता है, वे हैं:

रानी केतकी की कहानी	-	इंशा अल्ला खां
राजा भोज का सपना	-	शिवप्रसाद सितारे हिन्द
इन्दुमती	-	किशोरीलाल गोस्वामी
दुलाईवाली	-	बंगमहिला
एक टोकरी भर मिट्टी	-	माधव राव सप्रे
ग्यारह वर्ष का समय	-	आचार्य रामचन्द्र शुक्ल

आचार्य रामचंद्र शुक्ल जैसे विद्वान अगर किशोरीलाल गोस्वामी द्वारा रचित 'इन्दुमती' को सर्वप्रथम हिन्दी कहानी मानते हैं तो कुछ अन्य बंग महिला द्वारा रचित

'दुलाईवाली' को। नवीन अनुसंधानों के बाद माधवराव सप्रे द्वारा रचित 'एक टोक्करी भर मिट्टी' को सर्वप्रथम कहानी माना जाता है।

हिन्दी कहानी के विकास का अध्ययन करने के लिए कथा सम्राट प्रेमचंद को केन्द्र बिन्दु मानकर चार भागों में विभक्त कर सकते हैं:

1. प्रेमचंद पूर्व हिन्दी कहानी
2. प्रेमचंद युगीन हिन्दी कहानी
3. प्रेमचंदोत्तर हिन्दी कहानी
4. नई कहानी
5. साठोत्तरी कहानी

1. प्रेमचंद पूर्व हिन्दी कहानी

इस काल में हिन्दी कहानी अपना नया स्वरूप ग्रहण कर रही थी। इस काल में हिन्दी की प्रथम कहानी के संदर्भ में जिन कहानियों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, उनके अलावा माधव प्रसाद मिश्र की 'मन की चंचलता', लाला भगवानदीन की 'फ्लेग की चुड़ैल', वृन्दावन लाल वर्मा की 'राखी बंद भाई', विश्वभरनाथ शर्मा कौशिक की 'रक्षाबन्धन' आदि भी महत्वपूर्ण हैं।

चन्द्रधर शर्मा गुलेरी इस काल के सर्वश्रेष्ठ कहानीकार कहे जा सकते हैं। उन्होंने केवल तीन कहानियाँ लिखी हैं- 'उसने कहा था', 'सुखमय जीवन' और 'बुद्धू का काँटा'। कथ्य एवं शिल्प की दृष्टि से ये अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

2. प्रेमचंद युगीन हिन्दी कहानी

हिन्दी कहानी के क्षेत्र में प्रेमचंद के आगमन से एक नए युग का सूत्रपात हुआ। प्रेमचंद और प्रसाद इस युग के महत्वपूर्ण कहानीकार हैं।

प्रेमचंद

प्रेमचंद हिन्दी के युग प्रवर्त्तक कहानीकार माने जाते हैं। पहले वे 'नवाब राय' के नाम से उर्दू में लिखते थे। हिन्दी में उनकी सर्वप्रथम कहानी 'पंचपरमेश्वर' सन् 1916 में प्रकाशित हुई। प्रेमचंद ने हिन्दी कहानी में आदर्शोन्मुख यथार्थवादी परंपरा की प्रतिष्ठा की। प्रेमचंद की उर्दू कहानियाँ 'सोजे वतन' नाम से संग्रहीत हैं। प्रेमचंद ने अपने जीवनकाल में लगभग 300 से भी ज़्यादा हिन्दी कहानियों की रचना की, जो 'मान सरोवर' के नाम से आठ खण्डों में संकलित हैं। प्रेमचंद की कहानियों में भारत की साधारण जनता के जीवन की विभिन्न समस्याओं एवं संघर्षों का मार्मिक चित्रण मिलता है। हिन्दी साहित्य में पहली बार

किसानों एवं मज़दूरों के जीवन यथार्थ को पाठकों के सामने प्रस्तुत करने का श्रेय प्रेमचंद को ही है। साधारण और सरल भाषा-शैली में प्रेमचंद ने ये कहानियाँ लिखी थीं। पूस की रात, कफन, बड़े घर की बेटी, पंच परमेश्वर, शतरंज के खिलाड़ी आदि उनकी श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

प्रेमचंद की कहानी कला में भाषा का विशेष योगदान है। उनकी भाषा पूर्णतः पात्रानुकूल है तथा उसमें लोकोक्ति-मुहावरों का प्रयोग किया गया है। उनकी कहानियों में सरल, सहज, प्रवाहपूर्ण भाषा का प्रयोग किया गया है, जिसमें उर्दू, अंग्रेज़ी के शब्द प्रयुक्त हैं।

जयशंकर प्रसाद

प्रेमचंद युग के एक प्रतिभाशाली कहानिकार के रूप में जयशंकर प्रसाद का नाम उल्लेखनीय है। उनके पाँच कहानी संग्रह प्रकाशित हुए है। उनके नाम हैं- छाया, प्रतिध्वनि, आकाशदीप, आंधी और इंद्रजाल। प्रसादजी की पहली कहानी 'ग्राम' सन् 1909 में इन्दू पत्रिका में प्रकाशित हुई। उनकी कहानियों के कथानक प्रागैतिहासिक काल, वैदिक काल, उत्तर वैदिक काल तथा तत्कालीन समाज की समस्याओं से जुड़े हुए हैं। उनकी कहानियाँ आदर्शवाद का समर्थन करती हैं। 'पुरस्कार' कहानी इसका एक उदाहरण है। इसमें नायिका मधूलिका राष्ट्र की रक्षा करने के लिए व्यक्तिगत प्रेम का बलिदान करती है।

प्रसाद की कहानियों की भाषा संस्कृतनिष्ठ तत्सम शब्दावली से युक्त है। उसमें आलंकारिकता एवं काव्यात्मकता का समावेश है।

पारिवारिक जीवन की मार्मिक घटनाओं का चित्रण करने में श्री. विश्वंभरनाथ शर्मा कौशिक को विशेष सफलता मिली। पाण्डेय बेचन शर्मा उग्र ने अपनी कहानियों में राजनीतिक तथा सामाजिक विसंगतियों पर विद्रोह प्रकट किया। इसके अलावा आचार्य चतुरसेन शास्त्री, राधिका रमण प्रसाद सिंह, रायकृष्णदास आदि की कहानियाँ भी महत्वपूर्ण हैं।

3. प्रेमचंदोत्तर युगीन कहानी

सन् 1936 से 1950 तक की कहानी को कथा जगत् में प्रेमचंदोत्तर कहानी काल के रूप में जाना जाता है। कहानी इस काल की सबसे महत्वपूर्ण विधा रही है। अतः उसने जीवन और जगत् के विविध पक्षों को अपनी परिधि में समेटने का प्रयास किया।

इस काल के **प्रगतिवादी** कथाकारों में सर्वप्रमुख हैं- यशपाल। उन्होंने मार्क्सवादी चेतना से अनुप्राणित होकर अनेक कहानियों की रचना की। वर्ग संघर्ष, शोषण, सामाजिक एवं भौतिक रूढ़ियों पर आक्रोश उनकी कहानियों के विषय रहे हैं। उनके प्रमुख कहानी संग्रह हैं- वो दुनिया, पिजड़े की उड़ान, तर्क का तूफान, चक्कर क्लब आदि। रांगेय राघव, नागार्जुन, अमृतराय आदि इस परंपरा के अन्य रचनाकार हैं।

मनोविश्लेषणवादी लेखकों में अज्ञेय, इलाचंद्र जोशी एवं जैनेन्द्र के नाम उल्लेखनीय हैं। अज्ञेय ने कहानी को बौद्धिक एवं वैचारिक आधार प्रदान किए कथा प्रतीकों एवं बिंबों के प्रयोग में वृद्धि की। अज्ञेय के कुछ महत्वपूर्ण कहानियाँ हैं: रोज, पुलीस की सीटी, कोठरी की बात, पठार का धीरज आदि। इनकी कहानियाँ विपयगा, शरणार्थी, परंपरा, कोठरी की बात, जयदोल, अमर वल्लरी, ये तेरे प्रतिरूप नामों से संग्रहीत हैं। जैनेन्द्र की कहानियों में व्यक्ति-मनोविज्ञान के दर्शन होते हैं। उनके पात्र अपने पास-पड़ोस से उठाए हुए मानव-चरित्र हैं। उनकी प्रसिद्ध कहानियाँ हैं- जाह्नवी, पत्नी, मास्टर साहब, परख, ध्रुवयात्रा आदि। इलाचन्द्र जोशी की रोगी, मिस्त्री, परित्यक्ता, चौथे विवाह की पत्नी, प्रेतात्मा आदि कहानियाँ महत्वपूर्ण हैं।

4. नई कहानी

सन् 1950 के बाद की कहानी विषय और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से पूर्ववर्ती कहानियों से भिन्न है। पुरानी कहानी में जहाँ पूर्वाग्रह है, वहीं नई कहानी पूर्वाग्रह से मुक्त है। इसमें 'भोगा हुआ यथार्थ' होने के कारण यह प्रामाणिक अधिक है। नयी कहानी में विषयों की विविधता के साथ-साथ शिल्प का नयापन भी विद्यमान है। इसमें विषय वैविध्य भी है। इन कहानियों के विषय प्रमुख रूप से इस प्रकार हैं:

1. ग्रामीण अंचल की कहानियाँ
2. नगर बोध की कहानियाँ
3. यथार्थ बोध की कहानियाँ
4. यौन समस्याओं का चित्रण करनेवाली कहानियाँ
5. व्यंग्य प्रधान कहानियाँ

छठे दशक के आरंभ में हिन्दी कहानी में ग्रामीण अंचल की कहानियों ने पाठकों को आकर्षित किया। इन कहानिकारों में शिवप्रसाद सिंह, मार्कण्डेय, फणीश्वरनाथ रेणु के नाम प्रमुख हैं। लालपान की बेगम, तीसरी कसम, ठेस आदि रेणु की प्रमुख आँचलिक कहानियाँ हैं।

नयी कहानी में नगर बोध की प्रवृत्ति प्रमुख रूप से व्यक्त हुई है। आज के नगरीय जीवन में व्याप्त सतही सहानुभूति, आन्तरिक ईर्ष्या, स्वार्थपरता, जीवन की कृत्रिमता आदि की अभिव्यक्ति कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, अमरकान्त आदि की कहानियों में पायी जा सकती है। निर्मल वर्मा द्वारा रचित 'परिन्दे' कहानी को ही नयी कहानी की प्रथम कहानी के रूप में विद्वानों ने माना है। राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, मोहन राकेश और अमरकान्त नई कहानी के आधारस्तंभों के रूप में जाने जाते हैं। नयी कहानी में आधुनिकता बोध कई रूपों में विद्यमान है।

नयी कहानी को समृद्ध करने में हिन्दी की कथा लेखिकाओं का भी महत्वपूर्ण स्थान है। उषा प्रियंवदा, मन्नू भण्डारी, कृष्णा सोबती, शिवानी, मेहरुन्नीसा परवेज़ एवं रजनी पनिकर जैसी कहानी लेखिकाओं ने पति-पत्नी और स्त्री-पुरुष के बीच के संबंधों को अपनी कहानियों में प्रमुख रूप से अभिव्यक्त किया है। 'मैं हार गई', 'त्रिशंकु', 'तीन निगाहों की एक तस्वीर', यही सच है- आदि मन्नू भण्डारी के प्रमुख कहानी संकलन हैं।

नए कहानिकारों में कुछ अन्य चर्चित नाम हैं-महीप सिंह, दिनेश पालीवाल, नरेन्द्र कोहली, गोविन्द मिश्र, ममता कालिया, निरुपमा सेवती, दीप्ति खण्डेलवाल, नमित सिंह आदि।

नयी कहानी हिन्दी कथा विकास यात्रा की एक उपलब्धि है। इसकी भाषा एवं शिल्प में भी विविधता है। रेणुजी की भाषा में ग्रामीण अंचल का सुगंध है तो कमलेश्वर, निर्मल वर्मा, मोहन राकेश की कहानियों में भाषा का लाक्षणिक स्वरूप देखा जा सकता है। नयी कहानी में भाषा की सांकेतिकता अधिक है, वर्णनात्मकता कम।

5. साठोत्तरी कहानी

सन् 1960 के बाद हिन्दी कहानी के क्षेत्र में यौन प्रसंगों की अधिकता, क्षणवादी मोह दृष्टि, अस्तित्ववादी दर्शन एवं शिल्प के प्रति सजगता के आरोप लगने लगे। इस कालखंड में कई कहानी आंदोलनों ने भी जन्म लिया।

कहानी के क्षेत्र में जो नए आंदोलनों का आरंभ हुआ, उनमें से कुछ के नाम हैं: 1. अकहानी, 2. सहज कहानी 3. सचेतन कहानी 4. समांतर कहानी।

ज्ञानरंजन, रवीन्द्र कालिया, कृष्ण बलदेव वैद, श्रीकान्त वर्मा, दुधनाथ सिंह, गंगा प्रसाद विमल **अकहानी** के प्रमुख हस्ताक्षर हैं। अकहानी में वस्तुतः विद्रोह का स्वर है, साथ ही उसमें यौन संदर्भों की मात्रा भी अधिक है। इसमें पात्रों के नाम-स्थान आदि न देकर वह, मैं, तुम आदि सर्वनामों का प्रयोग किया गया है।

सहज कहानी की अगुआई अमृत राय ने की थी। 'सहज' की व्याख्या करते हुए उन्होंने लिखा है कि जो आडंबरहीन हो, ओढ़ा हुआ न हो, वही सहज है।

सचेतन कहानी से जुडे कहानिकारों में महीप सिंह का नाम बहुचर्चित है। उन्होंने सचेतन दृष्टि को एक गतिशील स्थिति माना है। सचेतन कहानिकार की दृष्टि समाज एवं व्यक्ति के बाह्य संबन्धों पर ही नहीं, बल्कि आन्तरिक संबंधों तक भी पहूँचती है। वेद राही, महीप सिंह, रामदरश मिश्र, रामकुमार भ्रमर, बलदेव वंशी आदि सचेतन कहानी के प्रमुख हस्ताक्षर हैं।

प्रसिद्ध कथाकार कमलेश्वर द्वारा ही **समान्तर कहानी** का प्रवर्त्तन किया गया था। उन्होंने अक्तूबर 1974 से 'सारिका' नामक कहानी पत्रिका के 'समान्तर कहानी विशेषांकों' को प्रकाश करके इस आंदोलन को आगे बढ़ाया। समान्तर कहानिकार अपने युग के समान्तर सोचता और लिखता है। इसके केंद्र में 'आम आदमी' है। यह आंदोलन जन संघर्ष के प्रति समर्पित रचनाकारों का है, जो उसमें स्वयं भाग लेना भी चाहते हैं। इस आन्दोलन के प्रमुख रचनाकार हैं- कमलेश्वर, इब्राहिम शरीफ, कामतानाथ, मिथिलेश्वर, निरुपमा सेवती, जितेन्द्र भाटिया आदि।

नौवें एवं दसवें दशक में कहानी आंदोलनों से मुक्त हो गई। इस काल के प्रमुख कहानिकार हैं, भीष्म साहनी, सूर्यबाला, मैत्रेयी पुष्पा, मृदुला गर्ग, शैलेश, मटियानी, मंजुल भगत, चित्रा मुद्गल, नासिरा शर्मा, मिथिलेश्वर आदि। इस काल के अधिकांश कहानिकारों ने दलित एवं नारी मुक्ति से प्रेरित होकर तथा अन्य सामाजिक विषयों को अपनी कहानी का विषय बनाया है।

Module III

हिन्दी नाटक का विकास

हिन्दी में नाटक लेखन की परंपरा का विकास भी अन्य गद्य विधाओं की तरह भारतेन्दु युग से ही प्रारंभ होता है। उससे पहले भी प्राचीन काल से ही संस्कृत के अनुरूप नाटकों का सृजन होता आया है; पर पद्य रूप में ही ये लिख गये हैं तथा इनमें नाटक के तत्वों का अभाव है। भारतेन्दु ने आधुनिक काल में संस्कृत, बांग्ला तथा अंग्रेज़ी से कई नाटकों का अनुवाद भी किया। हिन्दी के प्रथम नाटक के संबंध में भी विद्वानों के बीच मतभेद है। रीवाँ नरेश महाराज द्वारा रचित 'आनंद रघुनंदन' को ही हिन्दी का सर्वप्रथम नाटक माना जाता है।

हिन्दी नाटकों के विकास क्रम का अध्ययन करने के लिए उसे निम्नलिखित कालखण्डों में विभक्त किया जा सकता है:

1. भारतेन्दु युग (सन् 1857 ई.से 1900 ई. तक)
2. प्रसाद युग (सन् 1900 ई.से 1950 ई. तक)
3. प्रसादोत्तर युग (सन् 1950 ई.के उपरांत)

1. भारतेन्दु युग

भारतेन्दु युग में मौलिक और अनूदित दोनों प्रकार के नाटकों का प्रचार हुआ। स्वयं **भारतेन्दु** ने दोनों प्रकार के नाटकों की रचना में अगुवाई की। विद्यासुन्दर, रत्नावली, धनंजय, विजय,कर्पूर मंजरी, पाखण्ड विडंबन, मुद्राराक्षस, दुर्लभ बन्धु उनके द्वारा अनूदित रचनाएँ हैं और भारत जननी, वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, सत्य हरिश्चन्द्र, श्री चन्द्रावली नाटिका, विषस्य विषमौषधम्, भारत दुर्दशा, नीलदेवी, अंधेर नगरी, सती प्रताप, प्रेम जोगिनी उनके द्वारा रचित मौलिक नाटक हैं।

भारतेन्दुजी के नाटकों में सुधारवादी दृष्टिकोण के साथ-साथ राष्ट्रीय चेतना की अभिव्यक्ति हुई है तथा युगीन समस्याओं को जनता तक पहूँचाने की चेष्टा भी की गई है। अतीत के गौरव एवं ऐतिहासिक श्रेष्ठत्व का प्रतिपादन करने का बीज वपन भारतेन्दु युग में ही हुआ था, जिसका विकास प्रसादयुगीन नाटकों में दिखाई देता है।

भारतेन्दु काल के अन्य नाटककारों में प्रमुख हैं-लाला श्रीनिवासदास, राधाकृष्ण दास, बालकृष्ण भट्ट, राधाचरण गोस्वामी, गोपालराम गहमरी, किशोरीलाल गोस्वामी, प्रतापनारायण मिश्र आदि। लाला श्रीनिवासदास द्वारा रचित रणधीर प्रेममोहिनी तथा संयोगिता स्वयंवर उच्च कोटि की रचनाएँ हैं।

भारतेन्दु युग के नाटकों में ऐतिहासिक, पौराणिक, काल्पनिक कथाओं को विषय-वस्तु बनाया गया। समाज सुधार, राष्ट्रीय गौरव, अतीत गौरव को नाटकों के माध्यम से दर्शकों तक संप्रेषित किया गया। प्रहसनों का मूल उद्देश्य व्यंग्य के द्वारा समाज की कुरीतियों का समापन करना था। भारतेन्दु के नाटक अभिनेय हैं, तथा उनमें भारतीय नाट्यकला के तत्वों के साथ-साथ पाश्चात्य नाट्यकला के तत्वों का भी समावेश मिलता है। भारतेन्दु ही इस युग के सर्वश्रेष्ठ नाटककार हैं।

2. प्रसाद युग

प्रसादजी ने हिन्दी ऐतिहासिक नाटकों की रचना की है। उन्होंने भारत के अतीत गौरव का चित्रण करने के साथ-साथ राष्ट्रीयता की भावना को भी उत्पन्न करने का प्रयास अपने नाटकों के माध्यम से किया है।

सबसे पहले हिन्दी नाटकों में पात्रों के अन्तर्द्वन्द्व का कलात्मक चित्रण प्रसाद ने ही किया था। उनके नाटकों में दार्शनिकता की छाया फैली हुई है। उनके नाटक न तो सुखान्त हैं, न दुःखान्त, वे प्रसादान्त माने जाते हैं। उनके नाटकों में ऐतिहासिक नाटकों की संख्या अधिक है। ऐतिहासिक होते हुए भी वे समस्यामूलक हैं। 'राज्श्री', 'विशाख', 'स्कन्दगुप्त', 'अजातशत्रु', 'चन्द्रगुप्त', 'ध्रुवस्वामिनी' उनके प्रमुख ऐतिहासिक नाटक हैं। 'जनमेजय का नागयज्ञ' उनका पौराणिक नाटक है। प्रसाद के नाटकों में इतिहास और कल्पना का सुन्दर समन्वय मिलता है। 'अजात शत्रु' पर बौद्ध दर्शन का स्पष्ट प्रभाव है। 'ध्रुवस्वामिनि' में प्रसाद जी ने 'नारी मुक्ति' के विषय को अपनाया है।

नाट्य शिल्प की दृष्टि से प्रसादजी के नाटक अद्वितीय हैं। उनमें भारतीय एवं पाश्चात्य नाट्यकला का सुन्दर समन्वय हुआ है। पर उनके नाटक पाठ्य अधिक हैं, अभिनेय कम।

प्रसाद युग के अन्य नाटककारों में हरिकृष्ण प्रेमी, लक्ष्मी नारायण मिश्र, सेठ गोविन्ददास, गोविन्द वल्लभ पन्त, उपेन्द्रनाथ अश्क, वृन्दावनलाल वर्मा, किशोरीदास वाजपेयी, वियोगी हरि, चतुरसेन शास्त्री, पाण्डेय बेचन शर्मा 'उग्र' आदि के नाम लिए जा सकते हैं।

लक्ष्मीनारायण मिश्र समस्यामूलक नाटकों के लिए प्रसिद्ध हैं। उनके नाटकों में संन्यासी, राक्षस का मंदिर, मुक्ति का रहस्य, सिंदूर की होली तथा आधी रात महत्वपूर्ण हैं। 'सिंदूर की होली में मिश्रजी ने विधवा विवाह एवं नारी उद्धार जैसी समस्याओं को प्रस्तुत किया है।

उपेन्द्रनाथ 'अश्क' ने स्वर्ग की झलक, छठा बेटा, अलग-अलग रास्ते, अंजो दीदी, अंधी गली, कैद और उड़ान, जय पराजय आदि अनेक नाटकों की रचना की।

साध ही पूर्वयुगों के समान संस्कृत, बंगला, अंग्रेज़ी से नाटकों का हिन्दी में अनुवाद भी इस युग में हुआ।

प्रसादोत्तर नाटक

प्रसादोत्तर नाटकों का प्रारंभ हम सन् 1950 ई. से मान सकते हैं। इस काल के बाद लिखे गये नाटक जीवन यथार्थ से अधिक जुड़े हुए हैं तथा उनमें रंगमंचीयता एवं अभिनेयता का विशेष ध्यान रखा गया है। इस युग के नाटकों में विषय-वस्तु एवं शिल्प की दृष्टि से बदलाव नज़र आने लगा।

प्रसादोत्तर नाटककारों में विष्णु प्रभाकर, जगदीशचन्द्र माथुर, धर्मवीर भारती, लक्ष्मीनारायण लाल, रामकुमार वर्मा, मोहन राकेश, नरेश मेहता, विनोद रस्तोगी, सुरेन्द्र वर्मा, डॉ. शंकर शेष, रमेश बक्शी, मुद्राराक्षस, नरेन्द्र कोहली, गिरिराज किशोर, गोविन्द चातक, जयनाथ नलिन आदि के नाम प्रसिद्ध हैं।

विष्णु प्रभाकर ने अपने नाटकों में आधुनिक भावबोध से उत्पन्न तनाव एवं जीवन-संघर्ष को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया है। इनके लिखे प्रसिद्ध नाटकों में 'डाक्टर', 'युगे-युगे क्रांति' और 'टूटते परिवेश' के नाम लिये जा सकते हैं। 'युगे-युगे क्रांति' में पीढ़ीगत संघर्ष की अभिव्यक्ति है तथा 'टूटते परिवेश' में पारिवारिक विघटन को यथार्थ अभिव्यक्ति मिली है। 'डॉक्टर' एक मनोवैज्ञानिक नाटक है, जिसमें भावना और कर्त्तव्य के अन्तर्द्वन्द्व को चित्रित किया गया है।

जगदीश चन्द्र माथुर ने हिन्दी रंगमंच को नई दिशा देने का प्रयास अपने बहुचर्चित नाटकों के माध्यम से किया। 'कोणार्क', 'शारदीया', 'पहला राजा' तथा 'दशरथ नंदन' उनके प्रमुख नाटक हैं।

मोहन राकेश

मोहन राकेश आधुनिक काल के सशक्त नाटककार माने जाते हैं। उन्होंने केवल तीन नाटकों की रचना की थी, फिरभी उनके नाटक हिन्दी साहित्य में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं। उनके नाटक हैं- 'आषाढ का एक दिन', 'लहरों के राजहंस' एवं 'आधे-अधूरे'। इनमें से 'आषाढ का एक दिन' में कवि कालिदास के प्रेम को नाटक की विषय-वस्तु बनाया गया है, 'लहरों के राजहंस' में नंद और सुंदरी के बीच के प्रेमको महात्मा बुद्ध के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत की गई है। 'आधे-अधूरे' मध्यम वर्गीय जीवन को प्रस्तुत करनेवाला एक सशक्त नाटक है।

मोहन राकेश के नाटकों के शिल्प अद्वितीय है। रंगमंचीय दृष्टि से ये पूर्ण रूप से सफल हैं। संवाद, भाषा, प्रस्तुतीकरण, दृश्य संकेत, रंग निर्देश, छाया-प्रकाश आदि सभी दृष्टियों से वे सफल मंचीयता के योग्य हैं।

धर्मवीर भारती का 'अंधा-युग' आधुनिक भावबोध को प्रस्तुत करनेवाला गीति-नाट्य है। व्यक्ति को बाह्य संघर्ष की नहीं, आंतरिक संघर्ष भी झेलने पड़ते हैं और ये आंतरिक संघर्ष अधिक भयावह होते हैं। 'अंधायुग' एक सशक्त कृति है जिसमें महाभारत के पात्रों के माध्यम से आधुनिक युग के संत्रास, कुंठा, तनाव, अंतर्द्वन्द्व को अभिव्यक्त किया गया है।

प्रसादोत्तर काल के कुछ अन्य नाटककारों की महत्वपूर्ण रचनाएँ निम्न हैं:

लक्ष्मी नारायण लाल-अंधा कुआं, मिस्टर अभिमन्यु, कर्फ्यू

सुरेन्द्र वर्मा- दौपदी, नायक-खलनायक, विदूषक, सूर्य की अंतिम किरण से सूर्य की पहली किरण तक, आठवाँ सर्ग डॉ. शंकर शेष- एक और द्रोणाचार्य

मुद्राराक्षस- तिलचट्टा, तेंदुआ, मरजीवा, योर्स फेथफुली

सर्वेश्वर दयाल सक्सेना- बकरी

ज्ञानदेव अग्निहोत्री- नेफा की एक शाम, शुतुरमुर्ग

भीष्म साहनी- कबीरा खड़ा बाज़ार में।

साठोत्तरी नाटक

साठोत्तरी नाटक जीवन में अकेलेपन, रिक्तता बोध, मानवीय संबंधों की जड़ता को अभिव्यक्ति देनेवाले विषयों से संबंधित है। ये नाटक आधुनिकता बोध की भूमिका पर लिखे गये हैं। इन नाटकों के शिल्प में भी नवीनता, सांकेतिकता एवं बिंब धर्मिता दिखाई पड़ती है।

इन नाटकों में अंधा कुआं (लक्ष्मीनारायण लाल), गन्धार की भिक्षुणी (विष्णु प्रभाकर), हत्यारे (नरेन्द्र कोहली), एक प्रश्न मृत्यु (डॉ.विनय), पागल घर (नंदकिशोर आचार्य), बांसुरी बजती रही (गोविन्द चातक) आदि अति महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं।

1990 के बाद लिखे गए 'कोर्ट मार्शल', 'सबसे उदास कविता', 'जलता हुआ रथ' स्वदेश दीपक के उल्लेखनीय नाटक हैं। नन्दकिशोर आचार्य के 'गुलाब बादशाह' एवं 'हस्तिनापुर' भी इसी काल के हैं। नहीं कोई अन्त नहीं (प्रताप सहगल), जादू का कालीन (मृदुला गर्ग), मुआवजे (भीष्म साहनी), भारत भाग्य विधाता (रमेश उपाध्याय) आदि नाटक भी उल्लेखनीय हैं।

कुलमिलाकर हिन्दी नाटकों की यह विकास यात्रा अनवरत जारी है। नए नाटककार प्रयोगधर्मी हैं। नाटक अब मानव जीवन की विसंगतियों को उजागर करनेवाली सशक्त विधा बन चुकी है।

हिन्दी एकांकी का विकास

हिन्दी में एकांकी रचना का आरंभ भारतेन्दु युग से हुआ था। भारतेन्दु ने संस्कृत नाट्य साहित्य से प्रेरणा ग्रहण करते हुए नाटक और एकांकी के विभिन्न रूपों के विकास की कोशिश की। उनकी 'अधेर नगरी' (प्रहसन), 'विषस्य विषमौषधम', वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति', 'प्रेमयोगिनी' आदि रचनाएँ प्राचीन ढंग के एकांकियों के लक्षणों से युक्त हैं। उनके अलावा राधाचरण गोस्वामी, बालकृष्ण भट्ट, राधाकृष्ण दास, कार्तिकप्रसाद आदि लेखकों ने भी एकांकी-सदृशा रचनाएँ लिखीं।

द्विवेदी युग में हिन्दी एकांकी पर पाश्चात्य एकांकी का प्रभाव स्पष्ट रूप से पड़ने लगा। उनके बाह्य रूप में थोड़ा अंतर दिखाई पड़ा। उन एकांकियों का लक्ष्य समाज सुधार था।

लगभग 1930 ई के बाद हिन्दी में एकांकी का वास्तविक विकास हुआ। लगभग उसी समय जयशंकर प्रसाद ने 'एक घूँट' की रचना की, जो आधुनिक ढंग का पहला एकांकी माना जाता है। प्रसाद के 'सज्जन' और 'करुणालय' को भी एकांकी के अंतर्गत ही रखा गया है। प्रसाद के बाद अनेक रचनाकारों ने इस विधा का विकास किया। 1938 में 'हंस' पत्रिका का एकांकी विशेषांक प्रकाशित हुआ, जिससे एकांकी कला से संबंधित अनेक नई बातें सामने आईं।

इसके बाद डॉ. रामकुमार वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क, लक्ष्मीनारायण मिश्र, उदयशंकर भट्ट, भुवनेश्वर प्रसाद, सेठ गोविन्द दास, जगदीश चन्द्र माथुर आदि ने कई एकांकियों द्वारा सामाजिक समस्याओं का सफल चित्रण किया। लक्ष्मी नारायण मिश्र ने अपने अनेक एकांकी संग्रहों के माध्यम से पौराणिक, ऐतिहासिक, सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक समस्याओं की चर्चा की। सेठ गोविन्द दास ने आदर्शवादी दृष्टिकोण के साथ सामाजिक, ऐतिहासिक आदि विभिन्न प्रकार के एकांकी लिखे। जगदीश चन्द्र माथुर ने यथार्थवादी शैली में विभिन्न समस्याओं को प्रस्तुत करके उनका समाधान भी दिया है। उनके एकांकी रंगमंचीय दृष्टि से सफल भी हैं।

लक्ष्मीनारायण लाल, धर्मवीर भारती, मोहन राकेश, भारत भूषण अग्रवाल, विनोद रस्तोगी, प्रभाकर माचवे, सुरेन्द्र वर्मा आदि ने कई एकांकियों और रेडियो एकांकियों की रचना करके आधुनिक एकांकी के क्षेत्र में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

द्वितीय महायुद्ध के बाद एकांकियों और ध्वनि रूपकों को प्रमुखता प्राप्त हुई। पिछले कुछ वर्षों से हिन्दी में विभिन्न विषयों पर आधारित असंख्य एकांकी लिखे गए। इनमें सामाजिक एवं नैतिक विषयों पर सबसे अधिक सशक्त और प्रौढ़ एकांकी लिखे गये। डॉ. जयनाथ नलिन, डॉ. अर्जुन चौबे, गोविन्दलाल माथुर, प्रो. इन्दु शेखर आदि एकांकीकारों ने

आधुनिक युग एवं समाज का विश्लेषण अत्यंत सुक्ष्म एवं व्यंग्यात्मक शैली में प्रस्तुत किया है। विष्णु प्रभाकर, हरिकृष्ण प्रेमी, शिवकुमार ओझा आदि एकांकीकारों ने राष्ट्रीयता को प्रमुखता दिया। डॉ. धर्मवीर भारती ने आधुनिक जीवन के असंगितयों का उद्घाटन एकांकियों के माध्यम से किया। उनमें यथार्थवादी दृष्टिकोण देख सकते हैं।

एकांकी लेखन में प्रवृत्त साहित्यकारों ने हिन्दी में कई ध्वनि-रूपकों और रेडियों एकांकियों की रचना की है। इनके अलावा गीति-नाट्य की तरह काव्यात्क शैली में एकांकी लिखने में भी कई लेखक सफल हुए हैं। उनमें आरसी प्रसाद सिंह, भगवती चरण वर्मा आदि उल्लेखनीय हैं।

आज का हिन्दी एकांकीकार देशी और विदेशी-विविध नाट्य साहित्यों के संपर्क में आ रहा है। एक ओर उस पर जहाँ अंग्रेज़ी, अमरीकी और रूसी नाटकों का प्रभाव पड़ रहा है, वहाँ दूसरी ओर भारतीय लोक नाटकों का भी। अतः वह आज इस क्षेत्र में नवीन प्रयोग कर रहा है।

डॉ. रामकुमार वर्मा

आधुनिक हिन्दी एकांकी के जनक के रूप में डॉ. रामकुमार वर्मा जाने जाते हैं। इनके एकांकी कला की दृष्टि से सुन्दर बन पड़े हैं। इन्होंने ऐतिहासिक और सामाजिक एकांकी लिखे हैं और वे अधिकांश दुखांत हैं। इनके पृथ्वीराज की आँखें, रेश्मी टाई, चारुमित्रा, सप्त किरण, चार ऐतिहासिक एकांकी महत्वपूर्ण हैं।

भुवनेश्वर प्रसाद

सन् 1960 के बाद प्रयोगादी नाटकों का पर्यवसान आधुनिकतावादी ऊलजलूल (एब्सर्ड) नाटकों में होता है जिनका मूल स्वर असहायता, चरम निराशा, अराजकता और शून्यवाद में होता है। ऊलजलूल या व्यर्थताबोधक एकांकियों के प्रथम पुरस्कर्ता के रूप में भुवनेश्वर प्रसाद जाने जाते हैं। उनका 'कारवाँ' एकाकी संग्रह 1936 में प्रकाशित हुआ था। इसमें 'श्यामा : एक वैवाहिक विडंबना', 'शैतान', 'रोमांस-रोमांच', और 'कारवाँ' एकांकी संग्रहीत हैं। शा, लाटेंस और फ्रायड से प्रभावित ये एकांकी नए होकर भी प्रेम के त्रिकोण फ्रेम में बंधकर पुराने ही हैं। 1938 में 'ऊसर' के प्रकाशन के साथ व्यर्थता-बोध नाटक की शुरुआत होती है। 'ताँबे के कीड़े' ऊलजलूल या विसंगत नाटकों का ऐसा नमूना है जिसकी परंपरा हिन्दी में 55 वर्ष बाद चली। भुवनेश्वर ने द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर वैश्विक दृष्टि को इन एकांकियों में अपनाया। इसमें कोई कथा नहीं है, चरित्र नहीं है, कथानक नहीं है, संवादों का सामंजस्य नहीं है। वस्तुतः यह बेतरतीब आवाज़ों का एक कोलाज है, एक अमूर्त चित्र है जिससे आधुनिक जीवन का अर्थहीन संत्रास अभिव्यक्त होता है। एकांकियों में प्रयुक्त शब्दों के बीच का मौन कितना अर्थपूर्ण और नाटकीय होता है इसका एहसास भुवनेश्वर को बहुत पहले हो चुका था।

हिन्दी आलोचना का विकास

किसी भी साहित्य रचना के विवेचन, विश्लेषण या मूल्यांकन को अथवा साहित्य के संबंध में किसी सामान्य सिद्धांत के प्रतिपादन को आलोचना या समीक्षा कहते हैं। संस्कृत साहित्य में प्राचीन काल से लेकर आलोचना-साहित्य बहुत विकसित था। हिन्दी में भी रीतिकालीन आचार्यों ने संस्कृत के काव्यशास्त्रीय ग्रंथों का अनुकरण करते हुए आलोचनात्मक ग्रंथ लिखे हैं। आधुनिककालीन आलोचना का आरंभ भारतेन्दु युग में ही हुआ था। इस युग में पत्र-पत्रिकाओं के पर्याप्त विकास के कारण आलोचना के लिए आवश्यक माध्यम उपलब्ध हो गया। उस समय उपन्यास, नाटक, कहानी, निबंध आदि गद्य की विभिन्न विधाओं के विकास के कारण प्रत्येक रचना के संबंध में भिन्न-भिन्न समीक्षक अपनी भिन्न रुचि और प्रकृति के अनुसार विचार-विमर्श करने लगे।

भारतेन्दु ने आलोचना के क्षेत्र में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया था। उनके 'नाटक' नामक ग्रंथ में नाट्य शास्त्र संबंधी सैद्धान्तिक आलोचना की गई है। इसमें भारतेन्दुजी का मौलिक चिन्तन प्रकट है। भारतेन्दु ने इसमें प्राचीन भारतीय नाट्यशास्त्र एवं आधुनिक पाश्चात्य समीक्षा साहित्य का समन्वय करते हुए तत्कालीन हिन्दी के नाटककारों के लिए सामान्य नियम निर्धारित किए गए हैं। उनके द्वारा प्रवर्तित समालोचना के कार्य को आगे बढ़ाने का श्रेय बदरीनारायण चौधरी प्रेमघन और बालकृष्ण भट्ट का है। प्रेमघनजी ने अपनी 'आनन्द कादंबिनी' पत्रिका में लाला श्रीनिवासदास के नाटक 'संयोगित स्वयंवर' तथा 'बंगविजेता' नामक कृति की विस्तृत आलोचना प्रस्तुत की। बालकृष्ण भट्ट ने 'हिन्दी प्रदीप' में सच्ची समालोचना शीर्षक से संयोगिता स्वयंवर की आलोचना की।

महावीर प्रसाद द्विवेदी के युग में समीक्षा का उचित विकास हुआ। 1903 में सरस्वती पत्रिका के संपादक के रूप में श्री. महावीर प्रसाद जी समीक्षा के क्षेत्र में आये। कालिदास की निरंकुशता, नैषध चरित चर्चा, विक्रमांक देव चरित चर्चा आदि उनके समीक्षात्मक ग्रंथ हैं। द्विवेदीजी ने अपने ग्रंथों में प्राचीन एवं नवीन कवियों के गुण-दोषों का विवेचन व्यंग्यात्मक शैली में किया।

द्विवेदी जी के बाद हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र में गणेश बिहारी मिश्र, श्यामबिहारी मिश्र और शुकदेव बिहारी मिश्र का प्रवेश हुआ। ये मिश्रबन्धु के नाम से प्रसिद्ध हुए। उनके 'हिन्दी नवरत्न', 'मिश्रबन्धु विनोद' आदि ग्रंथ अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र में **आचार्य रामचन्द्र शुक्ल** के आगमन से एक नई ऊर्जा उत्पन्न हुई। शुक्लजी ने आलोचना के सैद्धान्तिक, ऐतिहासिक, व्यावहारिक-इन तीनों रूपों के विकास में योग दिया। उन्होंने भारतीय परंपरा के सार तत्व को नए रूप में प्रतिष्ठित किया तो दूसरी ओर पाश्चात्य विद्वानों का अन्धानुकरण छोड़कर उनसे उचित बातें स्वीकार कीं। ऐतिहासिक

आलोचना के क्षेत्र में शुक्लजी का सबसे बड़ा योगदान उनका हिन्दी साहित्य का इतिहास है। उनके समस्त समीक्षात्मक साहित्य पर उनके व्यक्तित्व की विशिष्टता, दृष्टिकोण की आदर्शवादिता, चिन्तन की मौलिकता और अध्ययन की गंभीरता मिलती है। 'चिन्तामणी' में शुक्लजी के कई समीक्षात्मक निबंध संकलित हैं। 'कविता क्या है' शीर्षक निबंध में शुक्लजी के साहित्यिक दृष्टिकोण का सच्चा परिचय मिलता है।

शुक्लजी के समकालीन अन्य आलोचकों में डॉ. श्याम सुन्दरदास का नाम बहुत महत्वपूर्ण है।

शुक्लजी के परवर्ती युग में हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र में तीन विभाग प्रकट हुए- 1. सैद्धान्तिक समीक्षा 2. ऐतिहासिक समीक्षा 3. व्यावहारिक समीक्षा।

1. सैद्धान्तिक समीक्षा

इस विभाग में आचार्य शुक्लजी के बाद डॉ. गुलाब राय, डॉ. नगेन्द्र, आचार्य बलदेव उपाध्याय, लक्ष्मी नारायण सुधांशु, डॉ. रामलाल सिंह आदि कई आलोचकों ने योग दिया। गुलाब राय ने काव्य के रूप, सिद्धान्त और अध्ययन, हिन्दी नाटक-विमर्श आदि ग्रंथों में अपनी नूतन रोचक शैली का प्रदर्शन किया। उन्होंने पाश्चात्य और भारतीय काव्य सिद्धान्तों तथा काव्य रूपों की व्याख्या स्पष्ट शैली में की है। सैद्धान्तिक समीक्षा के क्षेत्र में डॉ. नगेन्द्र का स्थान अद्वितीय है। 'रीतिकाव्य की भूमिका' नगेन्द्र का महत्वपूर्ण ग्रंथ है। इसमें भारतीय सिद्धान्तों के स्पष्टीकरण में उन्होंने नई दृष्टि का परिचय दिया है। नाट्य-दर्पण, अरस्तु का काव्यशास्त्र, रससिद्धान्त, काव्य कला, काव्य में उदात्त तत्व आदि उनके समीक्षात्मक ग्रंथ हिन्दी के समीक्षा साहित्य के अमूल्य रत्न हैं।

आचार्य बलदेव उपाध्याय ने भारतीय काव्य-संप्रदायों के इतिहास एवं महत्व पर प्रकाश डालते हुए 'भारतीय साहित्य शास्त्र' नामक ग्रंथ की रचना की। इसके अलावा डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त ने साहित्य-विज्ञान, साहित्य का वैज्ञानिक विवेचन आदि ग्रंथों में भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र तथा आधुनिक मनोविज्ञान के आधार पर वैज्ञानिक पद्धति के द्वारा साहित्य की आत्मा का विश्लेषण किया है। डॉ. भगीरथ मिश्र, डॉ. गोविन्द त्रिगुणायत, सीताराम चतुर्वेदी, डॉ. ओमप्रकाश आदि ने भी इस दिशा में पर्याप्त योगदान दिया है।

2. ऐतिहासिक समीक्षा

ऐतिहासिक समीक्षा के क्षेत्र में अनेक विद्वानों ने साहित्य के इतिहास का अध्ययन करनेवाले स्वतंत्र इतिहास ग्रंथों की रचना की। डॉ. श्याम सुन्दर दास का 'हिन्दी भाषा और साहित्य', अयोध्या सिंह उपाध्याय का 'हिन्दी भाषा और उसके साहित्य का विकास' आदि ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रचनाएँ हैं।

आचार्य हज़ारी प्रसाद द्विवेदी ने 'हिन्दी साहित्य की भूमिका', 'हिन्दी साहित्य का आदिकाल', 'हिन्दी साहित्य : उद्‌भव और विकास' आदि ग्रंथों में आचार्य शुक्लजी की कई मान्यताओं को चुनौति दीं है। आचार्य द्विवेदी ने हिन्दी साहित्य के विभिन्न स्रोतों का अनुसंधान किया है। साथ ही उन्होंने इतिहास के संशोधन एवं स्पष्टीकरण के कार्य में नूतन दिशाओं का निर्देश किया। वे मुख्यतः शुक्लजी के पद्धति के आलोचक हैं, पर अपने मानवतावादी दृष्टिकोण तथा ऐतिहासिक पद्धति के कारण शुक्लजी से अलग हैं।

डॉ. रामकुमार वर्मा का नाम भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है। 'हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास' उनकी महत्वपूर्ण कृति है। यद्यपि इसमें हिन्दी साहित्य के मध्यकाल तक का विवेचन हुआ है, तो भी उनका विवेचन अत्यंत विशद एवं प्रामाणिक है।

डॉ. गणपतिचन्द्र गुप्त ने हिन्दी साहित्य का वैज्ञानिक इतिहास में अत्यंत नवीनता दिखाते हुए हिन्दी साहित्य की कई पुरानी मान्यताओं का खण्डन किया है। डॉ. नगेन्द्र ने अपने द्वारा संपादित हिन्दी साहित्य का इतिहास में गणपति चन्द्र गुप्तजी के सिद्धान्तों को स्थान दिया है।

3. व्यावहारिक समीक्षा

शुक्लजी के बाद व्यावहारिक आलोचना के क्षेत्र में अनेक प्रतिभाओं का जन्म हुआ। इस दिशा में आलोचकों के अनेक वर्ग भी उपस्थित हुए।

कुछ विद्वानों ने व्यावहारिक समीक्षा के क्षेत्र में शुक्लजी की परंपरा को आगे बढ़ाने का प्रयत्न किया। उन्होंने शुद्ध साहित्यिक दृष्टिकोण के साथ कृतियों का मूल्यांकन किया। इस परंपरा में आचार्य नंददुलारे वाजपेयी का नाम प्रमुख है। अपनी रचना हिन्दी साहित्यः बीस्वीं शताब्दी में उन्होंने नवीन दृष्टिकोण के साथ साहित्य का विश्लेषण किया है। इसके अलावा आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र, डॉ. इन्द्रनाथ मदान आदि भी इस क्षेत्र के महत्वपूर्ण हस्ताक्षर हैं।

संतुलित एवं वैज्ञानिक समीक्षा करनेवालों में डॉ. सत्येन्द्र का नाम महत्वपूर्ण है। डॉ. विजयेन्द्र स्नातक, डॉ. रामरतन भटनागर, डॉ. पद्‌मसिंह शर्मा कमलेश, डॉ. विश्वंभरनाथ उपाध्याय, द्वारिकाप्रसाद सक्सेना, डॉ. बच्चन सिंह आदि ने पुराने और नए साहित्यकारों की रचनाओं का गहरा अध्ययन करनेवाले कई महत्वपूर्ण समीक्षा ग्रंथ प्रस्तुत किए हैं।

मनोविश्लेषण और मनोविज्ञान के तत्वों के आधार पर समीक्षा करना व्यावाहारिक समीक्षा का ही एक अंग है। फ्रायड आदि पाश्चात्य मनोवैज्ञानिकों के सिद्धान्तों के आधार पर उन्होंने साहित्यिक कृतियों और कथापात्रों का विवेचन किया। डॉ.इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय आदि का नाम इस क्षेत्र में प्रमुख है। डॉ. देवराज उपाध्याय ने मनोविश्लेषणवादी दृष्टि से कथा साहित्य की व्याख्या की तथा डॉ. नगेन्द्र ने साहित्य की प्रेरणा एवं प्रयोजन संबंधी प्रसंगों की व्याख्या की।

हिन्दी में मार्क्सवादी या प्रगतिवादी दृष्टि लेकर समीक्षा करनेवालों में डॉ. रामविलास शर्मा का नाम सर्वोपरि है। प्रगति और परंपरा, संस्कृति और साहित्य, निराला, प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ आदि उनके महत्वपूर्ण समीक्षा ग्रंथ हैं। इनके माध्यम से उन्होंने अपने प्रगतिशील विचारों का खुलासा किया है। वर्गभेद पर आधारित समाज की पहचान को उन्होंने साहित्यकार के लिए आवश्यक माना। शिवदान सिंह चौहान, अमृतराय, डॉ.भागवतशरण उपाध्याय भी इस क्षेत्र के उल्लेखनीय हस्ताक्षर हैं। इसके बाद डॉ. नामवर सिंह का नाम प्रगति समीक्षकों में सर्वश्रेष्ठ है। 'कविता के नए प्रतिमान', 'दूसरी परंपरा की खोज', 'छायावाद : इतिहास और आलोचना आदि उनकी महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं।

हिन्दी के सौंदर्यशास्त्रीय एवं मिथकीय पद्धतिके आलोचकों में डॉ. रमेश कुंतल मेघ का नाम प्रसिद्ध है। डॉ. शशिभूषण सिंहल, डॉ. हुकुमचन्द राजपाल, डॉ. पुष्पा बंसल आदि ने भी इस दिशा में योगदान दिया है।

हिन्दी में प्रयोगवाद एवं नयी कविता को लेकर कई समीक्षाएँ निकली जिनमें आधुनिक समीक्षा दृष्टि का अनुभव प्राप्त होता है। तारसप्तक, दूसरा सप्तक और तीसरा सप्तक के कवियों ने अपने वक्तव्यों में प्रयोगवादी कविता तथा बदले हुए काव्यबोध के संबंध में परिचय दिया है। अज्ञेय ने त्रिशंकु, आत्मनेपद, हिन्दी साहित्यः आधुनिक परिदृश्य, आदि आलोचनात्मक कृतियों में काव्य के संबंध में अपने विचार अभिव्यक्त किए। 'एक साहित्यिक की डायरी', नयी कविता का आत्मसंघर्ष आदि कृतियों के द्वारा कवि मुक्तिबोध ने अपनी समीक्षात्मक दृष्टि का परिचय दिया है। गिरिजा कुमार माथुर, धर्मवीर भारती, लक्ष्मीकांत वर्मा, जगदीश गुप्त आदि ने भी इस दिशा में पर्याप्त योगदान दिया है। आधुनिक कविता को विषय बनाकर लिखनेवाले समीक्षकों की संख्या सबसे अधिक है। कुमार विमल, सुधीन्द्र, गणपति चन्द्र गुप्त, रमेशचन्द्रशाह, प्रेमशंकर आदि अनेक आलोचक इस विभाग में आते हैं।

हिन्दी साहित्य को गहराई और व्यापकता देने में अनुसंधान का क्षेत्र अत्यंत सहायक सिद्ध हुआ है। हिन्दी के श्रेष्ठ कवि तुलसीदास पर सर्वाधिक शोध प्रबंध प्रस्तुत हुआ है। हिन्दी साहित्य के विभिन्न युगों के कवियों एवं रचनाकारों पर उच्च कोटि के शोधकार्य संपन्न हुए हैं। भाषा वैज्ञानिक शोध समीक्षा के क्षेत्र में धीरेन्द्र वर्मा, उदयनारायण तिवारी, भोलानाथ तिवारी आदि के नाम प्रमुख हैं।

हिन्दी आलोचना के विकास में सरस्वती. साहित्य संदेश, आलोचना, समालोचक, नई धारा, धर्मयुग, साप्ताहिक हिन्दुस्तान, सारिका, कादंबिनी, कहानी, समीक्षा, वीणा, ज्ञानोदय, मधुमती, साक्षात्कार, प्रतीक आदि पत्रिकाओं ने योगदान दिया है।

Module IV
जीवनी साहित्य

सर्वप्रथम भारतेन्दु युग में पाश्चात्य साहित्य के प्रभाव के कारण हिन्दी साहित्य के क्षेत्र में जीवनी साहित्य का विकास हुआ था। भारतेन्दु के द्वारा चरितावली, बादशाह-दर्पण, पंच-पवित्रात्मा, उत्तरार्ध - भक्तमाल आदि जीवनियाँ लिखीं। कार्तिक प्रसाद खत्री ने मीराबाई का जीवन चरित्र तथा छत्रपति शिवाजी का जीवन चरित्र लिखा। पाश्चात्य साहित्य से कुछ जीवनियों के अनुवाद भी इसकाल में हिन्दी में आये।

द्विवेदी युग में जीवनी लेखन की परंपरा अत्यंत विकसित हुई। इस युग में कई लेखकों ने स्वामी दयानंद, रामकृष्ण परमहंस और विवेकानंद की जीवनियों को सफलतापूर्वक प्रस्तुत किया। राजनीतिज्ञों में गाँधीजी की जीवनी सबसे अधिक संख्या में लिखी गई। काका कालेलकर, धनश्यामदास बिड़ला आदि की रचनाएँ इनमें प्रमुख हैं। जवाहरलाल नेहरू राजेन्द्रप्रसाद, पटेल, चन्द्रशेखर आज़ाद, मौलाना अबूल कलाम आज़ाद, सुभाष चन्द्र बोस, जयप्रकाश नारायण, लाल बहादूर शास्त्री, इंदिरा गाँधी आदि कई राजनीतिज्ञों की जीवनियाँ हिन्दी में लिखी गईं। इसके अलावा महात्मा बुद्ध, पैगंबर मुहम्मद, शंकराचार्य आदि महात्माओं की जीवनियाँ भी लिखी गयीं। बनारसी दास चतुर्वेदी तथा अन्य लेखकों ने हिटलर, कार्ल मार्क्स, स्टालिन आदि विदेशी महापुरुषों की जीवनियाँ लिखीं। कुछ लेखकों ने एक ही कृति में अनेक महापुरुषों की जीवनियों को संकलित किया। कुछ लेखकों ने विदेशी भाषाओं में रचित जीवनियों को संकलित किया। कुछ लेखकों ने विदेशी भाषाओं में रचित जीवनियों का हिन्दी अनुवाद भी प्रस्तुत किया। इसके अलावा साहित्यिक क्षेत्र के महान रचनाकारों की जीवनियों को भी प्रकाशित किया गया। रामविलास शर्मा की 'निराला की साहित्य साधना' प्रेमचंद के पुत्र अमृत राय द्वारा रचित 'कलम के सिपाही' आदि महत्वपूर्ण हैं।

आत्मकथा

सामाजिक, राजनीतिक, साहित्यिक क्षेत्रों के विभिन्न व्यक्तियों ने अपनी आत्मकथाएँ लिखकर इस विधा को संपन्न किया है। हिन्दी के आत्मकथा साहित्य में जैन कवि बनारसीदास की अर्द्धकथा को प्रथम आत्मकथा कहा जा सकता है। भारतेन्दु ने 'कुछ आप बीती, कुछ जग बीती' के लेखन आरंभ किया था जिसके कुछ अंश प्रकाशित हुए हैं। इसी युग में अंबिकादत्त व्यास की 'निज वृत्तांत', स्वामि श्रद्धानन्द कृत 'कल्याण पथ का पथिक' नामक रचनाएँ भी सामने आयीं। अनुवादों के द्वारा भी हिन्दी का आत्मकथा साहित्य पर्याप्त विकसित हुआ। गाँधीजी, नेहरू आदि की आत्मकथाओं का अनुवाद हिन्दी में किये गए। द्विवेदी युग में महावीर प्रसाद द्विवेदी की 'मेरी जीवन यात्रा' लघुरचना होते हुए भी महत्वपूर्ण है। प्रेमचंद द्वारा प्रकाशित हंस के आत्मकथा विशेषांक द्वारा आत्मकथा लेखन के क्षेत्र में काफी प्रोत्साहन मिला।

हिन्दी के साहित्यकारों की आत्मकथाओं में डॉ.श्यामसुन्दर दास की 'मेरी आत्म कहानी', राहुल सांकृत्यायन की 'मेरी जीवन यात्रा', यशपाल की 'सिंहावलोकन' आदि प्रसिद्ध हैं। डॉ. हरिवंश राय बच्चन की 'क्या भूलूँ क्या याद करूँ' तथा 'नीड़ का निर्माण फिर' आदि रचनाएँ हिन्दी आत्मकथा की अमूल्य निधियाँ है। इनके अलावा अभिनंदन ग्रंथों में भी जीवनियों और आत्मकथा के अंश बिखरे हुए पड़े हैं।

यात्रा वृत्त

हिन्दी साहित्य में यात्रावृत्त लेखन का शुभारंभ भी भारतेन्द्र युग से ही शुरू होता है। भारतेन्दु ने यात्रा विषयक कई लेख 'कविवचनसुधा' में प्रकाशित किए थे। इनमें लखनऊ की यात्रा, शरयू पारकी यात्रा महत्वपूर्ण हैं। द्विवेदी युग में यात्रावृत्तें का क्षेत्र व्यापक होने लगा। रामनारायण मिश्र, कन्हैयालाल मिश्र, प्रोफ. मनोरंजन, सेठ गोविन्द आदि कई लेखकों ने इस काल में हिन्दी के यात्रा साहित्य को समृद्ध किया।

हिन्दी यात्रा वृत्त लेखन में श्री. राहुल सांकृत्यायन का स्थान बहुत ऊँचा है। उनका पूरा जीवन घूमने फिरने में व्यतीत हुआ था। तिबत्त की यात्रा पर आधारित 'तिबत्त में सवा वर्ष' नामक उनकी रचना ने वहाँ के जन-जीवन की सशक्त झाँकी प्रस्तुत की है। मेरी यूरोप यात्रा, मेरी तिबत्त यात्र आदि ग्रंथ भी उन्होंने लिखे हैं। 'मेरी लद्दाख यात्रा', 'किन्नर देश में', 'राहुल यात्रावली', 'रूस में पच्चीस मास', 'एशिया के दुर्गम भूखण्डों में' आदि अनेक ग्रंथ स्वदेश और विदेश के विभिन्न स्थानों की सुन्दर झाँकियाँ प्रस्तुत करनेवाले हैं।

यात्रा साहित्य में जवाहरलाल नेहरू द्वारा रचित 'आँखों देखा रूस' उनकी रूस यात्रा संबंधी प्रतिक्रियाओं का सजीव वर्णन करती हैं। यात्रावृत्त लेखकों में श्री. यशपाल का नाम भी आता है। 'लोहे की दीवार के दोनों ओर', 'राहबीती' आदि रचनाएँ उल्लेखनीय हैं। आधुनिक कवि अज्ञेय ने 'अरे यायावर रहेगा याद', 'एक बूँद सहसा उछली' आदि कृतियों के द्वारा हिन्दी के यात्रावृत्त साहित्य को समृद्ध किया है। इस विधा में विष्णु प्रभाकर, डॉ. नगेन्द्र, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, प्रभाकर द्विवेदी, रामकृष्ण रघुनाथ आदि अनेक लेखकों का नाम आता है। हिन्दी में विदेश भ्रमण पर आधारित यात्रावृत्त ज़्यादा आए हैं, जबकि भारत-भ्रमण संबंधी कम लिखे गए हैं।

गद्यकाव्य

गद्यकाव्य में वैयक्तिक सुख-दुःख, आशा-निराशा आदि घनीभूत भावनाओं को, साधारण गद्य से भिन्न, भावपूर्ण गद्य में व्यक्त किया जाता है। इसमें छंदोबद्ध काव्य के समान रसात्मकता और संवेदनशीलता मिलती है। इस प्रकार की रचनाओं का सृजन हिन्दी में रवीन्द्रनाथ ठाकुर की 'गीतांजली' के प्रभाव के फलस्वरूप होने लगा। राय कृष्णदास, वियोगी हरि, चतुरसेन शास्त्री, माखनलाल चतुर्वेदी, डॉ.रघुवीर सिंह आदि गद्यकाव्य लेखकों में प्रमुख हैं। रायकृष्णदास के गद्यकाव्य प्रकृतिपरक है तो वियोगी हरि के गद्यकाव्य भक्तिपरक और राष्ट्रप्रेम संबंधी हैं। माखनलाल चतुर्वेदी द्वारा लिखित साहित्य देवता प्रसिद्ध गद्यकाव्य है जिसमें राष्ट्रीयता का स्वर प्रमुख है। डॉ. रघुवीर सिंह की 'शेष स्मृतियाँ' भी एक प्रसिद्ध रचना है। हिन्दी गद्यकाव्य के क्षेत्र में योगदान देनेवाली महिला साहित्यकार हैं, दिनेशनंदिनी चौरडया। शारदीया, वंशी-रव, उन्मन आदि कृतियाँ नारी मन की प्रेम-भावनाओं पर आधारित है। हिन्दी गद्यकाव्य की रचनाएँ परिमाण में बहुत कम हैं। फिरभी नारीप्रेम, राष्ट्रप्रेम, अध्यात्म, इतिहास, जीवन- दर्शन तथा अन्य अनेक विषयों को लेकर हिन्दी में सुंदर गद्य काव्य लिखे गये।

संस्मरण और रेखाचित्र

संस्मरण और रेखाचित्र में थोड़ा-सा अंतर होते हुए भी उनको एक ही विभाग में रखते हैं। संस्मरण में स्मरणीय व्यक्ति की अपेक्षा वर्णित घटना तथा परिवेश को अधिक रोचक ढंग से प्रस्तुत करते हैं। व्यक्ति चित्र, शब्द चित्र या रेखा चित्र में किसी व्यक्ति, घटना, दृश्य आदि आदि कम से कम समय में कम प्रयत्न से, अधिक प्रभावपूर्ण शैली में प्रस्तुत करते हैं। अंग्रेज़ी में इसे 'थंप-नेल-स्केच' कहते हैं। भारतेन्दु युग में सर्वप्रथम बालमुकुन्द गुप्त द्वारा संस्मरण लिखा गया जो प्रताप नारायण मिश्र पर आधारित था। आचार्य रामदेव, श्रीरामदास गोड़, इलाचंद्र जोशी, वृन्दावनलाल वर्मा, महावीर प्रसाद द्विवेदी आदि कई लेखकों द्वारा हिन्दी में लिखे गये संस्मरण इस विधा को आगे बढ़ाते रहे। संस्मराणात्मक रेखाचित्रों की नई दिशा के विकास में श्रीराम शर्मा, बनारसीदास चतुर्वेदी तथा महादेवी वर्मा का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। श्रीराम शर्मा की 'बोलती प्रतिमा', 'प्राणों का सौदा', 'जंगल के जीव', बनारसीदासजी की हमारे आराध्य आदि इस विधा की प्रमुख रचनाएँ हैं। श्रीमती महादेवी वर्मा का नाम हिन्दी के रेखाचित्र और संस्मरण के क्षेत्र में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। 'अतीत के चलचित्र', 'स्मृति की रेखाएँ', 'पथ के साथी', 'स्मरणिका' आदि रेखाचित्र संग्रहों में महादेवी जी ने अपने संपर्क में आनेवाले साहित्यकारों, शोषित व्यक्तियों, दीन नारियों, जन्तुओं आदि का संवेदनामूलक चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है। लेखिका में जो चित्रकार और कवि का रूप है, वह इन रचनाओं में उभर आया है। रामवृक्ष बेनीपुरी की 'माटी की मूरतें', 'गेहूँ और गुलाब' आदि कृतियाँ इस क्षेत्र में उल्लेखनीय हैं।

रिपोर्ताज

नवीन साहित्य रूपों के अंतर्गत रिपोर्ताज का महत्वपूर्ण स्थान है। रिपोर्ताज शब्द फ्रांसीसी भाषा का है, जो रिपोर्ट से भिन्न है। रिपोर्ट में केवल तथ्यों का चयन होता है और उसमें कलात्मकता पर ध्यान नहीं दिया जाता। रिपोर्ताज में किसी विषय का आँखों-देखा या कानों-सुना वर्णन इतने प्रभावशाली ढंग से किया जाता है कि पाठकों के हृदय में उसकी अमिट छाप पड़ती है, वे उसे फिर भूल न सके। हिन्दी में रिपोर्ताज लेखन की परंपरा 1938 में शिवदान सिंह चौहान की रचना 'लक्ष्मीपुरा' से शुरू हुई। बंगाल के दुर्भिक्ष और महामारी के विषय में डॉ.रांगेय राघव ने विशाल भारत में जो रिपोर्ताज लिखा, वह अपनी मार्मिकता के लिए प्रसिद्ध है। 'तूफानों के बीच' में उनके मर्मस्पर्शी रिपोर्ताज संकलित हुए। हिन्दी के रिपोर्ताज लेखकों में भदन्त आनन्द कौसल्यायन, धर्मवीर भारती, कन्हैयालाल मिश्र, शमशेर बहादुर सिंह, श्रीकांत वर्मा का नाम प्रमुख है।

इंटर्व्यू- साहित्य

इंटर्व्यू साहित्य या साक्षात्कार भी हिन्दी गद्य की नवीनतम विधाओं में एक है। इसके लिए भेंटवार्ता, विशेष परिचर्चा आदि शब्द भी प्रयुक्त होते हैं। इसमें लेखक किसी विशेष व्यक्ति के साथ साक्षात्कार करने के बाद, किसी निश्चित प्रश्नमाला के आधार पर उसके व्यक्तित्व एवं कृतित्व के संबंध में जानकारी पा लेते हैं। हिन्दी गद्य में इस विधा के प्रवर्त्तन का श्रेय बनारसीदास चतुर्वेदी को है। उन्होंने रत्नाकर तथा प्रेमचंद से भेंट करके उनके व्यक्तित्व और कृतित्व के बारे में लिखा है। इंटर्व्यू साहित्य में सबसे लोकप्रिय रचना पद्मसिंह शर्मा 'कमलेश' की 'मैं इनसे मिला' शीर्षक कृति है, जो दो भागों में रचित है। देवेन्द्र सत्यार्थी की 'कला के हस्ताक्षर', तथा रणबीर रांग्रा की सृजन की मनोभूमि शीर्षक कृतियाँ भी स्मरणीय हैं। 'नई धारा', 'धर्मयुग', 'साप्ताहिक हिन्दुस्तान', 'सारिका', 'संगीत' आदि पत्रिकाएँ हिन्दी इंटर्व्यू साहित्य के क्षेत्र में विशेष स्तंभों के आयोजन से महत्वपूर्ण योगदान दे चुकी हैं।

पत्र साहित्य

हिन्दी साहित्य की गतिविधियों और समस्याओं पर प्रकाश डालनेवाले अनेक पत्र हिन्दी के गद्य साहित्य के अन्तर्गत आते हैं। व्यक्तिगत पत्रों के स्वतंत्र संकलन, विविध ग्रंथों में परिशिष्ट आदि के रूप में संकलित पत्र, पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित पत्र आदि इसमें आते हैं। प्रमुख साहित्यकारों, नेताओं और महापुरुषों के पत्र इस विधा के महत्वपूर्ण अंग हैं। अमृत राय द्वारा संपादित प्रेमचंद के पत्रों का संग्रह 'चिट्ठी-पत्री', काका कालेलकर द्वारा संपादित 'बापू के पत्र' आदि व्यक्तिगत पत्रों के विभाग में उल्लोखनीय हैं। बच्चनजी ने 'कवियों में सौम्य संत' नाम से कवि सुमित्रानंदन पंत के 126 मूल्यवान पत्रों का संकलन किया है। हिन्दी पत्र साहित्य के विकास में 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका', 'सरस्वती', 'माधुरी', 'धर्मयुग', 'ज्ञानोदय' आदि पत्रिकाओं ने भी योगदान दिया है।

हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का हिन्दी साहित्य के विकास में योगदान

पत्र-पत्रिकाएँ प्रजातंत्र पद्धति की सुव्यवस्था के चतुर्थ आधारस्तंभ हैं। लेखनी को तलवार से भी सशक्त माना गया है। अन्याय, अत्याचार, शोषण, अमानवीय व्यवहार आदि किसी भी विपरीत स्थिति का प्रतिरोध करने में पत्र-पत्रिकाओं ने जनता का साथ दिया है। भारत में प्रेस एवं पत्रि-पत्रिकाओं का जन्म अंग्रेज़ी शासनकाल में ही होता है। कलकत्ता में ही इसका श्रीगणेश हुआ था। इसी के अनुरूप हिन्दी भाषा में भी पत्र-पत्रिकाओं का आविर्भाव हुआ। हिन्दी का प्रथम समाचार पत्र है, उदंत मार्ताण्ड। इसके बाद बंगदूत, प्रजाहितैषी, बनारस अख़बार तथा सुधाकर आदि का भी जन्म हुआ।

भारतेन्दु का हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में अनन्यतम स्थान है। अन्य गद्य विधाओं की तरह पत्रकारिता को भी भारतेन्दु युग में ही नई दिशा मिली। भारतेन्दु तथा उनके सहयोगी मण्डल ने पत्रकारिता के क्षेत्र में विशेष योगदान दिया है। भारतेन्दु ने 1868 में 'कविवचन सुधा' का प्रवर्त्तन किया। उनके ही हरिश्चन्द्र मैगज़ीन के अलावा बाल बोधिनी, आर्य मित्र, काशी समाचार आदि बनारस से निकलनेवाली पत्रिकाएँ थीं। आनंद कादंबिनी, ब्राह्मण, भारतेन्दु, इंदु, भारतोदय आदि पत्र-पत्रिकाओं ने साहित्य के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय योगदान दिया है। इस काल के पत्र-पत्रिकाओं ने हिन्दी भाषा के रूप सुधार में भी बहुमूल्य योगदान दिया है।

सन् 1900 में इलाहाबाद से 'सरस्वती' पत्रिका का प्रकाशन हिन्दी भाषा एवं साहित्य के इतिहास में एक ऐतिहासिक घटना थी। 1903 में महावीर प्रसाद द्विवेदी इसके संपादक बने। इसके अलावा सुदर्शन, समालोचक देवनागर, मनोरंजन आदि का भी प्रकाशन द्विवेदी युग में हुआ। यद्यपि ये साहित्यिक एवं सांस्कृतिक पत्रिकाएँ थीं, फिरभी समय-समय पर राजनीतिक टिप्पणियाँ भी इनमें प्रकाशित होती थीं। गाँधीजी के प्रभाव से भी ये पत्रिकाएँ असंपृक्त नहीं रहीं। इन्होंने हिन्दी भाषा के परिष्कार तथा गद्य की नाना शैलियों एवं विधाओं के विकास में बढ़-चढ़कर योगदान दिया। इस दिशा में सरस्वती का विशेष स्थान है।

द्विवेदी युग के बाद इस क्षेत्र में उत्तरोत्तर परिपक्वता आई। चांद, प्रभा, माधुरी, विशाल भारत, सुधा, हंस, आदर्श आदि इस काल की उल्लेखनीय मासिक पत्रिकाएँ हैं। 'माधुरी' ने छायावाद का भरपूर समर्थन किया था। कृष्णकान्त मालवीय, डॉ.संपूर्णनंद, प्रेमचंद इसके महान संपादक रहे। 'हंस' प्रेमचंद के संपादकत्व में तथा उनके परवर्ती संपादकों के कार्यकाल में हिन्दी गद्य के विकास में महत्वपूर्ण योगदान देता आया है।

हिन्दी साहित्यिक पत्रकारिता के क्षेत्र में इसके बाद कई महत्वपूर्ण पत्रिकाओं का जन्म हुआ, जिन्होंने कई महान साहित्यकारों के संपादकत्व में हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि की है। मतवाला, जागरण, आज, साप्ताहिक, हिन्दुस्तान, धर्मयुग, दिनमान, रविवार, सारिका, आजकल आदि। इनमें से कई आज बंद भी हो चुके हैं।